वेदान्तसंज्ञा ।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

भाषाटीकासहित ।

[illegible]

खेमराज श्रीकृष्णदासने

[illegible]

[illegible]

श्रीः ।

सूचनेयम् ।

वेदान्तसंज्ञेति नामकोयं ग्रंथः पुरातनोऽशुद्धश्च लब्धः ततो रोहतक इति पदवाच्य राजधान्यन्तर्गत बेदरी (बेरीति) नगरनिवासिना गौडवंशोद्भव द्विजशालिगरामात्मज पण्डित बसति रामशर्मणा बहु श्रमेण संशोधितः टिप्पणिकाभिरलंकृतश्च तदनंतरंतेनैव मया नृगिराऽनुवादितः इति

सर्वजनोंको मालूम होवे कि यह वेदान्तसंज्ञा नामक ग्रंथ आज तक किसी छापाखानामें मूलमात्र भी नहीं छपाहै यह ग्रंथ गुप्त होरहाथा बहुतसे मुमुक्षुजनों की अपेक्षासे जिलारोहतक कसबै बेरी निवासि शालग्रामात्मज पंडितबस्तीरामजीकेद्वारा हिंदुस्थानी सरलभाषामें टीका रचनाकराय प्रकाशितकी है इस छोटेसे ग्रंथके देखनेसेही वेदान्तके मतको जानेंगे और पंचदशी आदिबड़े ग्रंथोंको समझ सकेंगे इस लिये एकवार देखनेही योग्य यह अपूर्व ग्रंथ तयार भयाहै इसका संपूर्ण अधिकार हमने स्वाधीन रक्खा है ॥

सज्जनोंका कृपाभिलाषी–

खेमराज श्रीकृष्णदास

"श्रीवेंकटेश्वर" छापाखाना–मुंबई.

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ वेदांतसंज्ञा ।

श्लोकः ।

श्रीमद्गुरोः पादयुगं नत्वा तस्य प्रसादतः ॥
वेदांतसंज्ञाः प्रत्येकं निरूप्यंते यथामति ॥ १ ॥

भा०–अथ मंगलाचरण दोहा–मतिको जो निश दिन लषे, मतिसे लषा न जांय॥ताहि सच्चिदानंद कूं, प्रति दिन सीस नवाय॥१॥ भाषाटीका रचतहूं निजबुद्धीअनुसार, भूलचूक कांहं होयतो पंडित लेहि संभार॥२॥ श्लोकार्थः- श्रीमद्गुरुके दोनों चरणोंकी नमस्कार करिके तिसगुरुके प्रसादसे वेदांत-संज्ञा यथामति बुद्धिके अनुसार निरूपण करते हैं ॥ १ ॥

अध्यारोपाऽपवादाभ्यां निष्प्रपंचं प्रपंच्यते इति वृद्ध-वचनादत्राऽध्यारोपो नाम वस्तुन्यवस्त्वारोपः । वस्तु सच्चिदानन्दात्मकं ब्रह्म । अवस्तु अज्ञानादि-सकलजडसमुदायस्वरूपमहाप्रपंचः ॥

भा०–अध्यारोप और अपवादन्यायकरके निष्प्रपंच जो ब्रह्म है अर्थात् पंचतत्वोंके विकारोंसे रहित जो ब्रह्म है तहां पंचतत्व आचरण करिये है पंचतत्व दिखाई देते हैं; जैसे रज्जुमें सर्पादि तैसे, ऐसा यह वृद्ध-वचन है। यहां अध्यारोप नाम वस्तुविषे अवस्तुका आरोपण। वस्तु सत् चित् आनंदरूप ब्रह्म है, अवस्तु अज्ञानसे आदिलेके सकल जडसमुदाय-स्वरूप महाप्रपंच है तिस महाप्रपंचका आरोपण वस्तुसच्चिदानन्दमें होरहा है रज्जुमें सर्प, शुक्तिमें रजत, स्थाणूमें पुरुष इत्यादिकोंकी तरह यहां असत्य समझना यह अपवाद है इति।

प्रपंचद्वयम् १ अज्ञानद्वयं२ सूक्ष्मशरीरद्वयं३ स्थूलशरीरद्वयं४ शक्तिद्वयं५ निःश्रेयसद्वयं६ संशयद्वयम् ७ असंभावनाद्वयं ८ विपरीतभावनाद्वयं ९ प्रज्ञाद्वयं १० समाधिद्वयम् ११ ॥

भा०–प्रपंच दोहैं १ अज्ञान दोहैं २ सूक्ष्म शरीर दोहैं ३ स्थूल शरीर दोहैं ४ शक्ति दोहैं ५ निःश्रेयस दोहैं ६ संशय दोहै ७ असंभावना दों ८ विपरीतभावना दोहैं ९ प्रज्ञा दोहैं १० समाधि दोहै ११ इनसबोंके स्पष्टकरके आगे लिखेंगे इति ।

ब्रह्मत्रयं १ जीवत्रयं २ शरीरत्रयम् ३ अवस्थात्रयं४ कारणत्रयम् ५ कर्मत्रयम् ६ पुण्यकर्मत्रयं ७ पापकर्म्मत्रयम् ८ मिश्रकर्मत्रयं ९ प्रारब्धत्रयम् १० प्रतिबंधत्रयम् ११ संबंधत्रयम् १२ तापत्रयं १३ अध्यात्मिकत्रयम् १४ करणत्रयम् १५॥ गुणत्रयं१६ कालत्रयम् १७ मूर्तित्रयं १८ ज्ञानादित्रयं १९ प्रपंचत्रयं २० लोकत्रयं २१ ज्ञानप्रतिबंधकत्रयं २२ वासनात्रयं २३ श्रवणादित्रयं २४ ज्ञानादित्रयं२५ हेत्वादित्रयं २६ प्राणायामत्रयम् २७ आंध्यादित्रयं २८ तादात्म्यत्रयम् २९ एषणात्रयम् ३० सुषुप्त्यादित्रयम् ३१ ॥

भा०–ब्रह्म तीन है १ जीव तीन हैं २ शरीर तीन हैं ३ अवस्था तीन है ४ कारण तीन है ५ कर्म तीन हैं ६ पुण्यकर्म तीन हैं ७ पापकर्म तीन है ८ मिश्रकर्म तीन हैं ९ प्रारब्ध तीन है १० प्रतिबंध तीन हैं ११

संबंध तीन हैं १२ ताप तीन हैं १३ अध्यात्मादि तीन हैं १४ करण तीन हैं १५ गुण तीन हैं १६ काल तीन हैं १७ मूर्ति तीन हैं १८ ज्ञानादि तीन हैं १९ प्रपंच तीन हैं २० लोक तीन हैं २१ ज्ञानप्रतिबंधक तीन हैं २२ वासना तीन हैं २३ श्रवणादि तीन हैं २४ ज्ञानादि तीन हैं २५ हेत्वादि तीन हैं २६ प्राणायामादि तीन हैं २७ आंध्यादि तीन हैं २८तादात्म्यादि तीन हैं २९ एषणा तीन हैं ३० सुषुप्तिआदि तीन हैं ३१।

वर्तमानप्रतिबंधचतुष्टयम् १ पुरुषार्थचतुष्टयम् २ शब्दप्रवृत्तिचतुष्टयम् ३ वर्णचतुष्टयम् ४ आश्रमचतुष्टयम् ५ साधनचतुष्टयम् ६ अंतःकरणचतुष्टयम् ७ अनुबंधचतुष्टयम् ८ संकल्पादिचतुष्टयम् ९ वेदचतुष्टयम् १० प्रमाणचतुष्टयम् ११ विघ्नचतुष्टयम् १२ मैत्रादिचतुष्टयम् १३ भूतग्रामचतुष्टयम् १४ ब्रह्मविद्याचतुष्टयम् ॥ १५ ॥

भा०-वर्तमान प्रतिबंध चार है १ पुरुषार्थ चार है २ शब्दप्रवृत्ति निमित्त चार है ३ वर्ण चार है ४ आश्रम चार है ५ साधन चार है अनुबंध चार है ७ अंतःकरण चार है ८ संकल्पादि चार है ९ वेद चा है १० प्रमाण चार है ११ विघ्न चार है १२ मैत्रीआदि चार है १ भूतग्राम चार है १४ ब्रह्मविद्या चार है इन सबोंको स्पष्ट करके आ लिखेंगे इति ॥

कोशपंचकम् १ ज्ञानेन्द्रियपंचकं२शब्दादिपंचकं३ कर्मेंद्रियपंचकम् ४ वचनादिपंचकम् ५ प्राणादिपंचकम् ६ उपवायुपंचकं ७ कर्मपंचकं ८ सूक्ष्मभूतपंचकं ९ स्थूलभूतपंचकं १०.यमपंचकं ११

नियमपंचकं १२ भूमिकापंचकं १३ प्रलयपंचकं १४ भ्रमपंचकं १५ निवर्तकदृष्टांतपंचकं १६ दृष्टांतपंचकं १७ ख्यातिपंचकम् १८ इति ॥

भा०–पंच कोश है अर्थात् शरीरमें खजाने पांच है १ ज्ञानइंद्री पांच है २ शब्दादि पांच है ३ कर्मइंद्री पांच है ४ वचनादिक पांच है ५ प्राण पांच है ६ उपप्राण पांच है ७ कर्म पांच है ८ सूक्ष्मभूत पांच है ९ स्थूलभूत पांच है १० यम पांच है ११ नियम पांच है १२ भूमिका पांच है १३ प्रलय पांच है १४ भ्रम पांच है १५ निवर्तक दृष्टांत पांच हैं १६ दृष्टांत पांच है १७ ख्याति पांच है १८ इति ।

समाधिषट्कम् १ अरिषड्वर्गः २ षड्भावविकाराः ३ षट्कौशिकाः ४ षडूर्म्मयः ५ षड्विधलिंगानि ६ षडवस्थाः ७ षट्शास्त्राणि ८ षट्सूत्राणि ९ षडंगानि १० षट्कर्माणि ११ शमादिषट्कम् १२ ॥ इति ।

भा०–समाधि छह है १ वैरी छह है २ भावविकार छह है ३ कौशिक छह है ४ लहरी छह है ५ लिंग छह प्रकारके है ६ अवस्था छह है ७ शास्त्र छह है ८ सूत्र छह है ९ अंग छह है १० कर्म छह है ११ शमादि छह है १२ इति ।

सप्ताऽवस्थाः १ सप्तचैतन्यानि २ भूतादिसप्तकम् ३ अतलादिसप्तकम् ४ सप्तभूमिकाः ५ ॥

भा०–अवस्था सात है १ चैतन्य सात है २ भूतादि सात है ३ अतलादि सात लोक है ४ भूमिका सात है ५ इति ।

पुर्य्यऽष्टकम् १ प्रकृत्यऽष्टकम् २ अष्टांऽगानि ३ अष्टांगः ४ ॥

भा०-पुरी आठ है १ प्रकृति आठ है २ अंग आठ है ३ अष्टांग योग है ४ ।

नवविधसंसारः१ देवतापंचदशकम् १ अस्थ्यादिपं- चदशकम् २ ॥

भा०-संसार नव प्रकारका है १ देवता पंदरह है १ अस्थिआदि पंदरह है २ इति ।

युगादिषोडशकं १ षोडशकंलिंगं २ सप्तदशकं लिंगम् ३ नवदशकं लिंगं ४ चतुर्विंशतिस्तत्वानि षट्त्रिंशत्तत्वानि षण्णवत्तितत्वानि ॥

भा०-युगादि सोलह है १ सोलह लिंग है२लिंग सतरहभी है ३ लिंग उन्नीस है४तत्त्व चौवीश है छत्तीश तत्त्व हैं छियानवें तत्त्व है ।

परमहंससंन्यासद्वयं १ विद्वत्संन्यासद्वयं २ निग्रह- द्वयम्३ अहंकारद्वयम्४आनंदत्रयं जाग्रत्रयं स्वप्नत्र- यम् सुषुप्तित्रयं आत्मत्रयम्५ संन्यासचतुष्टयं १ भू- मिकाचतुष्टयं २ युक्तिचतुष्टयम्३ अजिह्वादिषट्कं १ मौनादिसप्तकं१ नाडिकादशकं नाडिदेवतादशकम् अष्टांऽतरंगमदाः षड्बहिर्मदाः अष्टमूर्तिमदाः अष्ट पाशाः १ सप्तधातवः१सप्तव्यसनानि २ षड्भ्रमाः१

भा०-परमहंसोंके पद दो है १ विद्वानोंके संन्यासदो है २ निग्रहदो है ३ अहंकारदो है ४ आनंद तीन है १ कर्म तीन है २ जाग्रत् तीन है३ स्वप्न तीन है ४ सुषुप्ति तीन है ५ आत्मा तीन है ६ संन्यास चार है १ भूमिका चार है २ युक्ति चार है ३ अजिह्वादि छह है १ मौनादिक सात है १ नाडी दशप्रकारकी है १ नाडीयोंके देवता दश है २ आठ

भीतरके मद है १ छह बहिर्मद है१आठ मूर्तियोंके मद है २ आठ फांसी है २ सात धातु है १ सात व्यसन है १ छह भ्रम है १ ।

पंचक्लेशाः १ आध्यात्मिकतापत्रयम् १ स्वर्गलोकतापत्रयम् २ पंचसप्ततिगुणाः १ रूपषट्कम् स्पर्शचतुष्टयम् १ ॥

भा०–पांच क्लेश है १ आध्यात्मिक आदि ताप तीन है १ स्वर्गलोकके ताप तीन है १ पिछत्तर गुण है १ रूप छह है १ स्पर्श चार है ।

शब्दद्वयम् १ रसपट्कम् १ गंधद्वयं १ नववर्णाः ऐश्वर्य्यादिषट्कम् १ उत्पत्त्यादिषट्कम्१नादादित्रयम् १ इत्येताः संज्ञाः शास्त्रज्ञैरुदाहृताः एताः प्रत्येकं निरूप्यंते ॥ इति ।

भा०–शब्ददो है १ छह रस है १ गंधदो है १ वर्ण नव है १ छहऐश्वर्य्य आदि है १ उत्पत्ति आदि छह है १ नाद तीन है ये इतनी संज्ञा शास्त्रके जानने वालोंनें कही है ये संज्ञा एक एकके प्रति निरूपण करी जाती है–इति ॥

सदऽसद्भ्यामनिर्वचनीयम् त्रिगुणात्मकं ज्ञानविरोधि अहमज्ञः मोहित इत्यनुभवबलात् भावत्वेन व्यपदेशरूपमज्ञानंमूलकारणत्वात् सत्वरजस्तमोगुणानां साम्यावस्थारूपत्वाच्च मूलप्रकृतिः प्रलयावस्था अव्यक्तम् व्याकृतं महासुषुप्तिः कूटं। निर्विकारेण तिष्ठतीति कूटस्थंज्ञानं विना न क्षरतीति अक्षरमितिव्यपदिश्यते। स्थूलसूक्ष्मकारणप्रपंचानां समष्टिमहाप्रपंचः॥

भा०-जो सत्य अरु असत्यइन दोनुवोंसे विलक्षण होवे न साचाहै न झूठा है साच झूठसे न्यारा है। तीनों गुणोंका आत्मा है ज्ञानका विरोधी है में अज्ञहूं मोहकूं प्राप्त होरहा हूं इस अनुभवबलसे होने करिके विपरीत रूप है उसको अज्ञान कहते हैं क्यों कि मूलका कारण होनेसे अरु सत्वरजतमोगुणोंका समरूप होनेसे अज्ञानको मूल प्रकृति भी कहते हें प्रलयाऽवस्था कहते है इसीकूं अव्यक्त कहते हें अव्याकृत भी कहते हें महासुषुप्ति भी इसीकूं कहते है ज्ञान विना जो नष्ट नहीं होवै इसलिये अक्षर भी अज्ञानको ही कहते है ऐसा व्यपदेश कहा है स्थूलसूक्ष्म कारण इन प्रपंचोंका जो समष्टि समग्र समूह है उसको महाप्रपंच कहते हें-इति॥

बाह्यप्रपंच आंतरप्रपंच इति प्रपंचद्वयम्।पृथिव्यादि पंचमहाभूतानि तज्जन्यो ब्रह्मांडस्तदंतर्भूतोपर्युपरि विद्यमानभूर्भुवः स्वःमेहर्जनस्तपःसत्यंनामकाऽधोऽधोविद्यमानाऽतल,वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल, पाताल, नाम चतुर्दश भुवनानि तन्निष्ठजरायुजांडजस्वेदजोद्भिज्जचतुर्विधभूतग्रामसमुदायः यथायोग्यं विविधनामरूपगुणधर्मशक्त्याश्रयः बाह्यप्रपंचः॥ इति।

भा०-बाह्य प्रपंच और आंतर प्रपंच ऐसे दोप्रकारका प्रपंच है तिसको स्पष्ट करिके दिखाते हैं।पृथिवीसे आदिलेके जो पंचभूत हैं तिन्होंसे उत्पन्न हुवा ब्रह्मांड ब्रह्मांडके अंतरभूत जो उपरि उपरि विद्यमान भूर्लोक भुवः लो०स्वः लो०महर्लो०जन लो०तपः लो०सत्य लोक है अरु इन्हके नीचे नीचे जो अतल वितल सुतल तलातल महातल रसातल पाताल नामक लोक ऐसे जो चतुर्दश भुवन हें तिनं विषे जो जरायुज अंडज स्वेदज उद्भिज्ज अर्थात् जेरसे अंडासे पसीनासे चोमासासे होने वाला चार प्रकार

का भूतग्राम समुदाय है. जैसा जैसा विविध प्रकारका नाम रूप गुण धः शक्तिके आश्रय जो हो रहा है सो बाह्य प्रपंच कहा जाता है-इति ।

अन्नमयादिपंचकोशस्थूलादिशरीरत्रयाऽस्तीत्यादिषड्भावविकारत्वङ्मांसादिषट्कौशिकाऽशनापिपासादिषडूर्मिश्रोत्रादिज्ञानेंद्रियपंचकवागादिकर्मेंद्रियपंचकप्रणादिवायुपंचकंमनआद्यंतःकरणचतुष्टयम् ॥ संकल्पाद्यंतःकरणवृत्त्यवस्थात्रयतद्व्यापारतदभिमानिविश्वतैजसप्राज्ञसमाधिमूर्छाकरणत्रयम् कामक्रोधाद्यरिषड्वर्गं साधनचतुष्टयसत्वादिगुणत्रयम् सुखदुःखज्ञानाऽज्ञानादिपंचक्लेशमैत्र्यादिचतुष्टययमाद्यष्टांगप्रत्यक्षादिप्रमाणचतुष्टयरोगारोग्यादिसमुदायः यथायोग्यं विविधनामरूपगुणधर्मशक्त्याश्रयः आंतरप्रपंचः इति विवेकः ॥

भा०—अन्नमय आदिक जो पंचकोश अन्नमय १ प्राणमय २ मनोमय ३ विज्ञानमय ४ आनंदमय स्थूलआदि तीन प्रकारके शरीर अस्ति, जायते, वर्द्धते, विपरिणमते, अपक्षीयते विनश्यति ऐसे ये षड्भावविकार अर्थात् छह प्रकारके होने वाले विकार त्वचाके आदिलेके छह कोश त्वचा १ मांस २ मज्जा ३ रक्त ४ अस्थि ५ वीर्य ६ ये है और अशनादिक अर्थात् क्षुधा पिपासा आदि छह ऊर्मी नाम लहरी श्रोत्रसे आदि पंचज्ञान इंद्री वाक्से आदि पंचकर्मइंद्री प्राणसे आदिलेके पंचवायु मनसे आदि चार अंतः करण मन बुद्धि चित्त अहंकार संकल्पादि अंतःकरणकी वृत्ति की जाग्रत् स्वप्न आदि तीन अवस्था तीनोंके व्यापार तिन्होंके अभिमानी विश्वतैजसप्राज्ञ समाधि मूर्च्छा । तीन करण कामसे आदि अरिषड् वर्ग. चार साधन सत्व आदि तीन गुण दुःख आदि पांच क्लेश चार मैत्र्यादि

यमसे आदि अष्टांग, चार प्रत्यक्ष आदि प्रमाण।रोग आरोग्यादि समुदाय जैसा तैसा अनेक नाम रूप गुण धर्म शक्तिके आश्रय जो है सो सब आंतर प्रपंच कहा है ऐसा विवेक है इति ॥

समष्ट्यज्ञानं व्यष्ट्यज्ञानमिति अज्ञानद्वयम् अज्ञानस्यसमष्ट्यभिप्रायेणैकत्वव्यपदेशः व्यष्ट्यभिप्रायेण नानाव्यपदेशः समष्ट्यज्ञानमीश्वरोपाधिः उत्कृष्टोपाधितया विशुद्धसत्वप्रधानामाया अखिलकारणत्वात् कारणशरीरम् आनंदप्रचुरत्वात् कोशवदात्मन आच्छादकत्वाच्चानंदमयकोशः सर्वोपरमत्वात्सुषुप्तिः अतएव समष्टिस्थूलसूक्ष्मशरीरत्वस्थानमितिचोच्यते व्यष्ट्यज्ञानं जीवोपाधिः इयं व्यष्टिर्निकृष्टोपाधितयामलिनसत्वप्रधानाऽविद्या अहंकारादिकारणत्वात् कारणशरीरमानंदप्रचुरत्वादेवहेतोः कोशवदात्मन आच्छादकत्वाच्चानंदमयः कोशः सर्वोपरमत्वात्सुषुप्तिः अतएव व्यष्टिस्थूलसूक्ष्मशरीरलयस्थानमितिचोच्यते इति ॥

भा०-समष्टि अज्ञान अरु व्यष्टि अज्ञान ऐसे दो प्रकारका अज्ञान है. अज्ञानकों समष्टिअभिप्राय करके एक कहा जाता है, व्यष्टिअभिप्रायसे अज्ञानकू नाना कहते है अर्थात् अनेक कहतेहैं ईश्वरकी उपाधीकूं समष्टि अज्ञान कहते है उत्तम उपाधि करीके तहां विशुद्धसत्व गुणप्रधानवाली माया है इसी मायासहित अज्ञानकूं अखिल अर्थात् सभीका कारण होनेसे कारण शरीर कहते है आनंद जादे होनेसे कोश नाम म्यानकी तरह अर्थात् जैसे तलवारको म्यान ढकलेता है तैसे आत्माकूं ढकनेसे तहां आनंदमय कोश रहता है. सब इंद्रीमन आदिका उपराम होनेसे सुषुप्ति

अवस्था है इसी वास्ते समष्टिके स्थूल१सूक्ष्म२ इन दोनों शरीरोंका लय स्थान है इति। जीवउपाधीकूं व्यष्टि अज्ञान कहते है यह व्यष्टिअल्प उपाधिता करिके मलिनसत्व प्रधान अविद्या है, अहंकारादिकोंका कारण होनेसे कारण शरीर रहता है विशेष आनंदका हेतु होनेसे कोश म्यानकी तरह आत्माको ढकनेसे आनंदमयकोश कहाता है सभीका उपराम होनेसे सुषुप्ति अवस्था है इसी वास्ते व्यष्टिके स्थूल और सूक्ष्म शरीरका लयस्थान है ऐसे कहा जाता है ॥ इति ॥

समष्टिसूक्ष्मशरीरं व्यष्टिसूक्ष्मशरीरमिति सूक्ष्मशरीरद्वयम्. अखिलसूक्ष्मशरीरमेकबुद्धिविषयत्वेनवनवज्जलाशयवद्वा समष्टिः अनेकबुद्धिविषयतया वृक्षवज्जलाशयवद्वा व्यष्टिश्च भवति यत्समष्टिकारणशरीरतयाऽज्ञोपाधिभूतमखिलं सूक्ष्मशरीरं हिरण्यगर्भोपाधिः विज्ञानमयादिकोशत्रयं जाग्रत् वासनामयत्वात् स्वप्नः अतएवसमष्टिस्थूलप्रपंचलयस्थानमिति चोच्यते १

भा०–समष्टि सूक्ष्म शरीर व्यष्टि सूक्ष्म शरीर ऐसे दो सूक्ष्म शरीर है, संपूर्ण जो सूक्ष्म शरीर है तिनको एक बुद्धिविषयता करिके बनकी तरह वा जलाशय समुद्रकी तरह होवे उसको समष्टि कहे है अर्थात् बहुत वृक्ष है परंतु वनबुद्धि एकविषयता है अरु प्रति वृक्ष भिन्न २ बुद्धि करना यह अनेक बुद्धिविषयता कहलाती है सोव्यष्टिके लक्षणमें जानना अनेक विषयता करिके वृक्षकी तरह जलोंकी तरह जो होवे उसकों व्यष्टि कहते हैं जो समष्टि कारणशरीर ता करके अज्ञ उपाधिभूत है संपूर्ण सूक्ष्म शरीर है उसको हिरण्यगर्भोपाधि कहते है तहां विज्ञानमय आदि तीन कोश है अर्थात् विज्ञानमयः मनोमयः प्राणमयः जाग्रत् वासनामय अर्थात् जाग्रत् वासना प्रधान होनेसे स्वप्न अवस्था है इसी वास्ते समष्टिके स्थूल प्रपंच लय होनेका स्थान है ऐसा कहा जाता है इति।

पूर्वोक्तव्यष्टिकारणशरीरतया अज्ञोपाधिभूतं सकलं सूक्ष्मशरीरम्अनेकबुद्धिविषयतया व्यष्टिसूक्ष्मशरीरं तैजसोपाधिभूतं विज्ञानमयादिकोशत्रयम अत एव व्यष्टिस्थूलप्रपंचलयस्थानमिति चोच्यते इति ॥

भा०–पूर्वोक्त जो व्यष्टि कारणशरीर है तिस करिके अज्ञ उपाधिभूत अर्थात् में कछु नहीं जानता हूं ब्रह्मज्ञानरहित जो सब सूक्ष्म शरीर है सो अनेक बुद्धिविषयता करिके अर्थात् प्रति शरीर भिन्न २ समझके व्यष्टि सूक्ष्म शरीर कहलाते हैं सो तैजसकी उपाधि है तहां विज्ञानमय आदि तीन कोश हैं इसीवास्ते व्यष्टिके स्थूल प्रपंच अर्थात् स्थूलशरीर का लयस्थान है ऐसें कहा जाता है–इति।

समष्टिस्थूलशरीरं व्यष्टिस्थूलशरीरमिति स्थूलशरीरद्वयम् जरायुजांडजस्वेदजोद्भिज्जाख्यं च चतुर्विधं सकलं स्थूलशरीरं वनवज्जलाशयवद्वा एकबुद्धिविषयत्वात्सूक्ष्मशरीरा पेक्षया स्थूलत्वाच्च समष्टिस्थूलशरीरं विराडुपाधि अन्नविकारत्वात्कोशवदात्मन आच्छादकत्वाच्च अन्नमयकोशः स्थूलभोगायतनत्वाज्जाग्रदिति चोच्यते इति ॥

भा०–समष्टिस्थूलशरीर व्यष्टिस्थूलशरीर ऐसे दो प्रकारके स्थूल शरीर है. जरायुज, अंडज, स्वेदज, उद्भिज्ज, अर्थात् जेरसे अंडासे पसीनासे चमांसे चारप्रकारसे संपूर्ण स्थूल शरीर होते है तिन्होंको वनकी तरह जलाशयसमुद्रकी तरहहै व एकबुद्धिविषयता होनेसे अर्थात् जैसे अनेक वृक्षहै तो भी वन एक ही है अनेक जलोंका समुद्र एकही है ऐसे सबजीवोंका एकता समझनेंसे सूक्ष्म शरीरकी अपेक्षा करके स्थूल होनेसे समष्टि स्थूल शरीर कहते है सोविराट् उपाधि है अन्नका विकार होनेसे कोशकी तरह

आत्माकूं ढकनेसे अन्नमयकोश कहते हैं स्थूल भोगोंका आयतनस्थानहो- नेसे जाग्रत् कहते हैं–इति ।

पूर्वोक्तं चतुर्विधं स्थूलशरीरं सकलं वृक्षवज्जलाशय-वद्वा अनेकबुद्धिविषयतया सूक्ष्मशरीरापेक्षया स्थू-लत्वाच्च व्यष्टिस्थूलशरीरं विश्वोपाधिः अन्नविकार-त्वाद्धेतोरेवात्मनः कोशवदाच्छादकत्वाच्च अन्नम-यकोशः स्थूलभोगायतनत्वाज्जाग्रदिति चोच्यते-इति ।

भा०–पूर्वोक्त जो चार प्रकारका स्थूल शरीर ताको वृक्षकी तरह वा जलाशयकी तरह होनेसे अनेक बुद्धिविषयता करके अर्थात् प्रतिशरीर भिन्न २ बुद्धिसे विचारके देखनेसे और सूक्ष्म शरीरकी अपेक्षा करके स्थूल होनेसे व्यष्टि स्थूलशरीर कहते हैं सोविश्व उपाधि है अन्नविकारहेतु होनेसे आत्माकूं कोशकी तरह ढकनसे अन्नमयः कोशकहते हैं स्थूल भोगोंका आयतन स्थानहोनेसे जाग्रत अवस्था कहते हैं–इति ।

आवरणशक्तिर्विक्षेपशक्तिरिति शक्तिद्वयम् ॥ अंतर्दृ-गदृश्ययोर्भेदं बहिश्च ब्रह्मसर्गयोर्भेदं वा स्वात्माऽव-लोकयित्रीं बुद्धिं अखंडसच्चिदानंदं वा आवृणोती-त्यावरणशक्तिः ॥ १ ॥

भा०–आवरण शक्ति और विक्षेपशक्ति ये दोप्रकारकी शक्ती हैं तहां आवरण शक्तिकूं कहते हैं कि जोभीतरदृग् अर्थात् दृष्टि अरु दृश्यका भेद, बाहर जोब्रह्म अरु सर्गका भेद सो, स्वात्मावलोकयित्री अपने आत्माको दिखानेवाली ब्रह्मविद्यायुक्त जो बुद्धि तिसको अथवा अखंड सच्चिदानंद ब्रह्मको जो ढकले वे उसकूं आवरणशक्ति कहते हैं ॥

विविधस्वरूपेण भवनं विक्षेपशक्तिः ॥

भा०–प्र०विक्षेपशक्ति किसको कैहते हैं उ० अनेक स्वरूप करिके जो होवे उसकूं विक्षेप शक्ति कहते हैं ॥

अनर्थनिवृत्तिरानंदप्राप्तिश्चेति निःश्रेयसद्वयम् ॥ प्रमाणगतसंशयः प्रमेयगतसंशयश्चेति संशयद्वयम् ॥ तथाहि श्रुतिभिः कर्म बोध्यते उत सिद्धब्रह्म प्रतिपाद्यतेइत्येवंरूपा चित्तवृत्तिः प्रमाणगतसंशयः १ ॥

भा०–अनर्थकी निवृत्ति अरु आनंदकी प्राप्ति ये दो निश्रेयसहै संशय दोप्रकारके है एकतो प्रमाणगत संशय है दूसरा प्रमेयगत संशय है तथाहि–सो कहतेहै–श्रुतिकर्मकूं बोधन करतीहै अथवा क्या श्रुतियोंसे सिद्ध ब्रह्म प्रतिपादन किया जाताहै ऐसी चित्तकीवृत्ति होनेकूं प्रमाणगतसंशय कहतेहै ॥

ब्रह्म जगत्कारणं उत प्रधानादिकमित्येवं रूपाचित्तवृत्तिः प्रमेयगतसंशयः ॥ प्रमाणगताऽसंभावना प्रमेयगतासंभावना इत्यसंभावनाद्वयं ।

भा०–ब्रह्म जगत्का कारणहै क्या प्रधानादिक माया आदिक जगत्के कारण है ऐसी चित्तवृत्ति होनेकूं प्रमेयगत संशय कहतेहै प्रमाणगत असंभावना दूसरी प्रमेयगत असंभावना ऐसे असंभावना दोप्रकारकीहै ॥

ब्रह्मणः सिद्धत्वात्पृथिव्यादिवत्प्रमाणांतरगम्यत्वे श्रुतिः सिद्धब्रह्मप्रतिपादिका कथं भवेत् फलाभावान्नभवत्येवेति निश्चयात्मिका चित्तवृत्तिः प्रमाणगताऽसंभवना, ब्रह्मणो जगद्विलक्षणत्वेन स्थितत्वात् जगत्कारणत्वं कथं संभवति नसंभवत्येवेति निश्चयात्मिका चित्तवृत्तिः प्रमेयगत असंभावना इति ॥

भा०–प्रमाणगत असंभावनाको कहतेहै कि ब्रह्मको स्वतःसिद्ध होनेसे पृथिवी आदिकी तरह अन्य प्रमाण अगम्यत्व करके अर्थात् जो

पृथ्वी आदि पंच भूतमयहै उनकोही प्रमाणांतर करके श्रुति कहतीहै श्रुति स्वतःसिद्ध ब्रह्मकी प्रतिपादक कैसे है फलका अभाव होनेसे नहीहै क्या ऐसी निश्चयात्मिक चित्तवृत्तिको प्रमाण गत असंभावना कहतेहैं १ प्रमेयगत असंभावनाको कहतेहैंकि ब्रह्मको जगत्से विलक्षणता करके स्थित होनेसे अर्थात् ब्रह्मतो जगत्से विलक्षण व्यतिरिक्त धर्मवालाहै वह ब्रह्म जगत्का कारण कैसेहै अथवा नहीहै ऐसी निश्चयात्मिका चित्तवृत्तिको प्रमेयगत असंभावना कहतेहैं इति ॥

प्रमाणगतविपरीतभावना प्रमेयगतविपरीतभावना-इति विपरीतभावनाद्वयम् । ब्रह्मणः सिद्धत्वेन श्रुतीनां तत्प्रतिपादकत्वेन निष्फलत्वप्रसंगात् । श्रुतयः कर्मपरा एवेति निश्चयः प्रमाणगतविपरीतभावना ॥ तंतुपटयोः कार्य्यकारणयोः सारूप्यं दृश्यते अतो जगद्ब्रह्मणोः सारूप्याभावात् जगत्कारणं प्रधानादि कर्मेवेति निश्चयः प्रमेयगतविपरीतभावना इति ।

भा०-प्रमाणगत विपरीतभावना अरु प्रमेयगतविपरीतभावना ऐसे दो प्रकारकी विपरीतभावना होती है ब्रह्मको सिद्ध होनेसे श्रुतियोंकूं तिस ब्रह्मको प्रतिपादन करनेसे निष्फलत्वप्रसंगसे अर्थात् जो वस्तु स्वतःसिद्ध ही होती है तिसमें प्रमाणादिकदेना निष्फलत्व है ऐसा निष्फलत्व प्रसंग आवेगा इस लिये श्रुति जो है वे कर्मपर है अर्थात् विशेषता करके कर्मकोही वर्णन करती है ब्रह्मका प्रतिपादन नही करती ऐसा निश्चयको प्रमाणगत विपरित भावना कहते हैं १ ॥ तंतु अरु पटका कार्य्यकारणोंका सारूप्य देखिये है अर्थात् समान सदृशता देखिये है ऐसेही जगत् अरु ब्रह्मके सारूप्यका अभाव दीखनेसे जगत्का कारण प्रधानादिक है ऐसा निश्चयको प्रमेयगत विपरीतभावना कहते हैं क्योंकि जैसे प्रधान आदिक अर्थात् माया अहंकार

आदिक अनित्य हैं तैसाही जगत्भी अनित्य है ऐसी सारूप्यता मिलती है इतिभावः ॥

एवमांतरे तथाहि जगदंतर्यामिणमपिजगद्विलक्षणं ब्रह्मत्वमस्तिनवेति प्रत्यगात्मविषयकःसंशयः ॥१॥

भा०—ऐसा अंतर होनेसे तथाहि सोई कहते हैं कि जगत्के अंतर्यामी कोभी जगत्से विलक्षण ब्रह्मत्व है अथवा नहीं है इसको प्रत्यगात्मविषयक संशय कहते हैं ॥

कर्तृत्वाद्यनेकधर्मविशिष्टस्यममाऽकर्तृब्रह्मस्वरूपत्वं कथं भवेन्न भवत्येवेति निश्चयात्मिका चित्तवृत्तिः प्रत्यगात्मविषयकाऽसंभावना ॥ २ ॥

भा०—कर्तासे आदि अनेक धर्मयुक्त मेरेको अकर्ता अरु ब्रह्मस्वरूपत्व कैसे है अथवा क्या नहीं है ऐसी निश्चयात्मिका चित्तवृत्तिको प्रत्यग् आत्मविषयक असंभावाना कहते हैं—इति।

यद्यऽकर्ताहंतर्हिकथं ममंशास्त्रैस्त्वयाकर्तव्यमिति कर्मोपदेशः अतः कर्तेति निश्चयात्मिका चित्तवृत्तिः प्रत्यग्विपर्यिणीविपरीतभावना ॥ ३ ॥

भा०—जो मैं अकर्ताहूं तो मेरेको तैने कर्मकरनेंही चाहिये ऐसे शास्त्रों करके कैसे कर्मोका उपदेश है इसवास्ते कर्ताहूं ऐसी निश्चयात्मिका चित्तवृत्तिको प्रत्यग्विपर्यिणी विपरीतभावना कहते हैं ॥ इति।

स्थितप्रज्ञाऽस्थितप्रज्ञेति प्रज्ञाद्वयम् १ संप्रज्ञातसमाधिरसंप्रज्ञातसमाधिश्चेतिसमाधिद्वयम् २ एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म समष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणशरीरोपाधितयाविराट् १ हिरण्यगर्भ २ ईश्वर ३ इतिचोच्यते एतदेवब्रह्मत्रयम् ॥

भा०--स्थितप्रज्ञा अस्थितप्रज्ञा दो प्रकारकी बुद्धि है १ समाधी दो है संप्रज्ञात समाधि है अरु असंप्रज्ञात समाधी है ।

एक अद्वितीय ब्रह्म है वही समष्टीके स्थूल, सूक्ष्म, कारण, शरीरोंकी उपाधी करिके विराट् १ अरु हिरण्यगर्भ २ ईश्वर ३ इति उच्यते ऐसे कहा जाता है येही तीन ब्रह्म है. इति ।

ब्रह्म १ ईश्वरः २ साक्षी परमात्मा कूटस्थः अक्षरं जगदधिष्ठानं जगन्निषेधावधिभूतंच व्यवह्रियते बृहत्त्वाद्बृंहणत्वात् ब्रह्म, बृहत्त्वं व्यापकत्वं बृंहणत्वं शरीरवृद्ध्यादिहेतुत्वमितिविवेकः ॥ समष्टिस्थूलशरीरोपाधिकचैतन्यं विविधं राजमानत्वाद्विराट् ॥ विश्वेषु समस्तेषु नरेष्वहमित्यभिमानित्वाद्वैश्वानरः विशेषेण भासमानत्वाद्विराज इतिचव्यपदिश्यते ॥

भा०--ब्रह्म कहो अथवा ईश्वर कहो अ० साक्षी, अरु परमात्मा, अ कूटस्थ अक्षर जगदधिष्ठान जगन्निषेधावधिभूत, ये सब ब्रह्मकेही वाचः शब्द हैं ऐसा व्यवहार है ।

बृहत्त्वात् बडा होनेसे बृंहणत्वात् बढनेसे ब्रह्मका बडापन क है कि व्यापक होना बढना क्या है, शरीरवृद्ध्यादिहेतुत्व ऐसा विवेक है समष्टि स्थूलशरीरउपाधी चैतन्यकूं अनेक प्रकार करिके राजमा होनेसे विराट् कहते है, समस्त विश्वविषे अरु नरोंविषें मैं हूं ऐसा अभि मान होनेसे वैश्वानर कहतेहे, विशेषता करिके भासमान होनेसे विराज् कहते, है, ऐसा, व्यपदेश, है ॥, इति, ।,

समष्टि सूक्ष्मशरीरोपाधिचैतन्यं ज्ञानशक्तिमत्त्वाद्धिरण्यगर्भः मणिसूत्रवत्समस्तप्रपंचानुस्यूतत्वात्सूत्रात्मा क्रियाशक्तिमत्त्वात्प्राणः इति च व्यपदिश्यते ॥

भा०—समष्टि सूक्ष्मशरीर उपाधि चैतन्यको ज्ञानशक्तिवाला होनेसे हिरण्यगर्भ कहते हैं, मणिके विषे सूतकी तरह समस्त प्रपंच विषे अनुस्यूत, अर्थात् जैसे मणियोंकी मालामें सब जगह सूत्र पुया रहता है तैसे होनेसे सूत्रात्मा कहते हैं, क्रियाशक्तिवाला होनेसे प्राण कहते हैं ऐसा व्यपदेश है ॥

समष्ट्यज्ञानोपाधिकचैतन्यंसमस्तप्राणिनियामकत्वादीश्वरः। समस्तप्राणिहृदयनिष्ठत्वेसति समस्तप्राणिकर्मप्रेरकत्वादंतर्यामीरूपरहितत्वादव्याकृतः॥

भा०—समष्टिके अज्ञान उपाधि चैतन्यको समस्त प्राणीयोंका नियामक प्रभु होनेसे ईश्वर कहते हैं, समस्त प्राणियोंके हृदयमें स्थित होनेसे समस्त प्राणियोंका कर्मप्रेरक होनेसे अंतर्यामी कहते हैं, अरूप होनेसे अर्थात् रूपरहित होनेसे अव्याकृत कहते हैं॥

सकलाऽज्ञानतत्कार्यावभासकत्वाज्जगत्कारणंकेनापि प्रमाणेन न व्यज्यत इत्यव्यक्तमितिच व्यपदिश्यते एकएवप्रत्यगात्मा॥ व्यष्टिस्थूलसूक्ष्मकारण शरीरोपाधिकत्वेन विश्वःतैजस प्राज्ञ इति च व्यपदिश्यते एतदेवजीवत्रयमितिव्यवहारः॥

भा०—सकल जो अज्ञान अरु तिस अज्ञानका कार्य्यका अवभासक होनेसे जगत्का कारण कहते हैं. किसी प्रकार करिकैभी न्यारा प्रगट नहीं होवे उसको अव्यक्त कहते हैं. प्रत्यगात्मा एकहै सो व्यष्टिके स्थूल सूक्ष्म कारण शरीर की उपाधि करिके विश्व अरु तैजस अरु प्राज्ञ ऐसे कहाता है ॥

प्रत्यगात्मा शरीरत्रयाधिष्ठानं जीवः साक्षी कूटस्थः न क्षरतीत्यक्षरः चित् चैतन्यं चितिरितिपर्यायाः।

प्रातिलोम्येनांऽचतीति प्रत्यक् तथाहि प्रातिलोम्ये नानृतजडदुःखात्मकाऽहंकारादिभ्यो विलक्षणत्वेन सच्चिदानंदात्मकतयाअंचति प्रकाशते इति प्रत्यक्॥

भा०-प्रत्यक्आत्मा तीनों (स्थूल सूक्ष्म कारण,) शरीरोंका अधिष्ठान (मालिक) जीवहै सो साक्षीभी कहलाता है कूटस्थ है क्षीण नही होता इस लिये अक्षर है चित् कहिये चैतन्य है चिति ऐसाभी कहा जाताहै. जो प्रातिलोम्य अर्थात् जो शरीरधर्मोंसे विलक्षणता करके प्रकाशित हो सो प्रत्यक् है तथाहि सो दिखाते हैं - कि जो (प्रातिलोम्यकरके) झूठे, जडदुःखात्मक अहंकारआदिकोंसे विलक्षण रहके सच्चिदानंद स्वरूपसे प्रकाश होवे सो प्रत्यक् आत्मा है इति ॥

तथाचाहंकारोनात्मा देहोनात्मा इंद्रियाणिनात्मा इत्येवं निकृष्टाहंकारादिचैतन्यं प्रत्यगित्यर्थः। शरीरद्वयोपादानव्यष्टचज्ञानकल्पनाधिष्ठानत्वाच्छरीरत्रयाधिष्ठानम्॥स्वाध्यस्तान् पदार्थान् साक्षाद्वृत्तिव्यवधानं विना अपरोक्षेणेक्षते प्रकाशयतीति साक्षी॥

भा०-तथाच इति-अहंकार आत्मा नहीं है देहभी आत्मा नहीं है इंद्रियभी आत्मा नही है ऐसे जो निकृष्ट अहंकारादिकोंमें चैतन्य प्रकाशता है सो प्रत्यक् है और दो (सूक्ष्म, कारण,) शरीरोंका उपादान अर्थात् जो आदि कारण (व्यष्टि) सब विश्वका अज्ञान है तिसकी कल्पनाका अधिष्ठान होनेसे तीनों शरीरोंका अधिष्ठान (स्थान) है और अपनेमें (अध्यस्त) भासभये पदार्थोंको साक्षात्, वृत्तिके व्यवधान विना अर्थात् निरंतर वृत्ति करके(अपरोक्षेण) साक्षात् करके देखता है इस लिये साक्षी है. कूट. (घन) की तरह जो निर्विकार करके ठहरे सो कूटस्थ कहिये ऐसा विवेक है. इति ॥

व्यष्टिस्थूलशरीरोपाधिक आत्मा, स्थूलसूक्ष्मकारणशरीराऽसमस्ताभिनिविष्टत्वाद्विश्वः सूक्ष्मशरीरमपरित्यज्य स्थूलशरीरप्रवेष्टृत्वाच्च विश्वः समस्तव्यवहारकृतकत्वाद्व्यावहारिकः चिद्वद्भासमानत्वे सति चिल्लक्षणरहितत्वाच्चिदाभास इति व्यपदिश्यते। व्यष्टिसूक्ष्मशरीरोपाधिक आत्मा तेजोमयांतःकरणवृत्तिविशिष्टत्वात्तेजसिवासनायामहंममाऽभिमानितया तृप्तो भवति इति व्युत्पत्तेश्चतैजसः प्रतीतिकालमात्रे विद्यमानत्वात्प्रातिभासिकः अज्ञानकार्य्यनिद्राशक्तिकल्पितत्वात्स्वप्नः कल्पितः इति व्यपदिश्यते ॥

भा०-व्यष्टि, संपूर्ण विश्वके अलग २ स्थूलशरीरकी उपाधिवाला आत्मा जो है-वह स्थूल, सूक्ष्म, कारण, इन तीनों शरीरोंका अभिमानी होनेसे विश्व संज्ञक कहलाता है और सूक्ष्मशरीरको विनाही त्यागे हुए स्थूलशरीरमें प्रवेश रखता है इस लिये भी विश्व संज्ञक कहाता है-संपूर्ण व्यवहार करनेवाला होनेसे व्यवहारिक है. चित् चैतन्य, भासमान होनेसे भी, चित् चैतन्य ब्रह्मके, लक्षणोंसे रहित होनेसे चिदाभास भी कहते हैं, व्यष्टिके सूक्ष्म शरीरकी उपाधिवाला आत्मा तेजमय अंतःकरणकी वृत्तिसे विशिष्ट (युक्त) रहनेसे और तेजसि अर्थात् वासनामें (अहं) मैं हूं (मम) मेराहै ऐसे अभिमान करके तृप्त रहता है ऐसी व्युत्पत्ति करके उसे तैजस कहते हैं. प्रतीतिकाल मात्रमें विद्यमान होनेसे प्रातिभासिक कहते हैं और अज्ञानका कार्य निद्राशक्तिकल्पित होनेसे यही स्वप्नकल्पित होता है अर्थात् स्वप्न ऐसा भी कहा जाता है ॥

व्यष्टयऽज्ञानोपाधिक आत्मा शरीरद्वयोपादानव्यष्टयऽज्ञानतत्कार्य्यावभासकत्वादस्पष्टोपाधि-

तया अनतिप्रकाशकत्वात्प्रज्ञारूपचैतन्यं प्रधान-
पुरुषत्वाच्च प्राज्ञः अवस्थात्रयानुस्यूततया विद्यमान-
त्वात् पारमार्थिकः । अविद्याहंकारदेहाद्युपाधिपरि
च्छिन्नत्वेन भासमानत्वादवच्छिन्न इति व्यपदिश्यते
स्थूलं सूक्ष्मं कारणं इतिशरीरत्रयं॥३॥जाग्रत्स्वप्नसु
षुप्त्यवस्था इत्यवस्थात्रयम ॥४॥ मनोवाक्कायानि
त्रिविधकारणानि॥५॥पुण्यपापमिश्रकर्माणि कर्मत्र-
यम् ॥६॥ पुण्योत्कर्षपुण्यमध्यमपुण्यसामान्यानीति
पुण्यकर्मत्रयम् ॥ ७ ॥

भा०-व्यष्टिके, संपूर्णजीवोंके अज्ञानकी उपाधिवाला जो आत्मा
सो दो शरीरोंका जो उपादानकारण व्यष्टिका अज्ञान है तिसके कार्य-
को (अवभासक) प्रकाश करनेवाला होनेसे और स्पष्ट उपाधि करके
अत्यंत नहीं प्रकाशक होनेसे (प्रज्ञा,) बुद्धिरूप चैतन्य है सोही प्रधान पु-
रुष है, इसलिये प्राज्ञ कहलाता है और तीनों अवस्थाओंमें (सूईमें जैसे
तागा पुया रहता है)तैसे अनुस्यूतता करके विद्यमान रहनेसे पारमार्थिक
है. अविद्या, अहंकार देह इन उपाधियोंसे(परिच्छिन्नत्व)अल्पज्ञ रहता हुआ
भासमान होनसे अवच्छिन्न ऐसा भी कहा जाता है स्थूल १ सूक्ष्म २
कारण ३ ये तीन शरीर जानो॥३॥ जाग्रत् १ स्वप्न २ सुषुप्ति ३ य तीन
अवस्था है॥४॥मन, वचन, शरीर, ये तीन करण है अर्थात् इन कर-
के किया जाता है॥५॥पुण्य, पाप, पुण्यपापसे मिलेहुए कर्म ऐसे तीन
प्रकारके कर्म है॥६॥पुण्योत्कर्ष पुण्यमध्यम पुण्यसामान्य, एसे तीन तो
पुण्यकर्म है॥७॥

पुण्योत्कर्षरूपकर्मणः हिरण्यगर्भशरीरप्राप्तिः फलं
पुण्यमध्यमरूपकर्मणः इन्द्रादिशरीरप्राप्तिःफलं पुण्य-

सामान्यरूपकर्मणः यक्षरक्षआदि शरीरप्राप्तिः फलं पापोत्कर्षपापमध्यमपापसामान्यानीतिपापकर्मत्रयम्॥८॥पापोत्कर्षस्यपरतापकर गुच्छगुल्मवृश्चिक यूकवनमक्षिकादिशरीरप्राप्तिः फलं पापमध्यमस्य आम्र- पनस- नारिकेल- महिष्यऽश्वगर्दभादि शरीप्राप्तिःफलं पापसामान्यस्य गोगजाश्वत्थतुलस्यादिशरीरप्राप्तिःफलं मिश्रोत्कर्ष- मिश्रमध्यम मिश्रसामान्यानीति मिश्रकर्मत्रयम् ॥ ९ ॥

भा०-पुण्योत्कर्ष अर्थात् विशेष पुण्यवाले कर्मका फल यह है कि हिरण्यगर्भ ब्रह्माके शरीरकी प्राप्ति होवे, मध्यम पुण्यवाले कर्मका फल इंद्रआदि शरीरप्राप्ति होना, सामान्य पुण्यवाले कर्मका फल यक्ष राक्षस आदि शरीर प्राप्ति होना है-पाप उत्कर्ष, पाप मध्यम, पाप सामान्य, ऐसे तीन पापकर्म हैं ॥ ८ ॥ पापउत्कर्ष, विशेषपापवाले कर्मका फल अन्यको दुःखदायी, (कंटकादिसे युक्त) गुच्छा, (गुल्म) थोहरसरीखा, बीछू जूंम वनकी मांखी इत्यादिकोंकी शरीरकी प्राप्ति है पाप मध्यम कर्मका फल आंम फालसा नारियल. वृक्ष भैंस घोडा गधा आदि शरीर प्राप्त होना है, सामान्य पापवाले कर्मका फल गौ हस्ती पीपलवृक्ष, तुलसी इत्यादिक शरीरकी प्राप्ति है-मिश्र उत्कर्ष, मिश्र मध्यम, मिश्र सामान्य, ऐसे तीन प्रकारके मिश्रकर्म हैं ॥ ९ ॥

मिश्रोत्कर्षस्यानिष्काम- कर्मानुष्ठानादि-निर्विकल्पकसमाधिपर्यंतयोग्यशरीरप्राप्तिःफलं मिश्रमध्यमस्य स्वाऽऽश्रमोचितकाम्यकर्मयोग्यशरीरप्राप्तिः फलम् । मिश्रसामान्यस्य चांडालव्याधादिशरीर प्राप्तिःफलं मनोवाक्कायभेदेन कामादिप्रेरितमनो-

वाक्कायकृतकर्मोत्कर्षादिभेदेन कर्मतत्फलं चानेकविधमितिज्ञातव्यम् ॥ इच्छाप्रारब्धं परेच्छाप्रारब्धम् अनिच्छाप्रारब्धमिति प्रारब्धत्रयम् ॥१०॥ तद्यथा स्वेच्छाकृतं भिक्षाटनादि । समाध्यवस्थायां शिष्यादिदीयमानमन्नादिकं परेच्छाकृतं । समाध्यवस्थायांव्युत्थानदशायां वा आकाशफलपातवदकस्मात्जायमानं पाषाणपतनकंटकवेधादिकमनिच्छाकृतम् ॥

भा०–मिश्रोत्कर्ष विशेषमिले हुए उत्तम कर्मका फल निष्कामकर्मके अनुष्ठानमें निर्विकल्प समाधिपर्यंत जो योग्य होवे ऐसा शरीरकी प्राप्ति होना और मिश्र मध्यम कर्मका फल अपनें आश्रमके योग्य काम्य कर्म करनें लायक शरीरकी प्राप्ति होना मिश्र सामान्य कर्मका फल चांडाल व्याध आदि शरीर प्राप्तहोना और मन वचन शरीर इनके भेदकरके काम आदिकी प्रेरणासे मन वचन शरीरसे किये कर्मोंका उत्कर्ष आदि भेदकर जो कर्म किया जाताहै उसका फल अनेक प्रकारका होताहै ऐसे जानना॥इच्छा प्रारब्ध १ परेच्छा प्रारब्ध २ अनिच्छा प्रारब्ध ३ ऐसे तीन प्रकारके प्रारब्ध हैं॥१०॥सो ऐसे कि भिक्षा मांगना आदि अपनी इच्छाकृत प्रारब्ध १ समाधि अवस्थामें शिष्य आदि जो कछु अन्न आदि देते हैं वह परेच्छाकृत प्रारब्ध हैं २ और समाधि अवस्थामें अथवा जाग्रत्में आकाशसे फल गिरनेकी तरह जो ऊपरसे पत्थर आदि गिरपडे अथवा कांटा आदि लगजावे यह अनिच्छाकृत प्रारब्धभोगहै ॥ ३ ॥

भूतप्रतिबन्धो, वर्त्तमानप्रतिबन्ध, आगामिप्रतिबन्धश्चेति ज्ञानप्रतिबन्धकप्रतिबन्धत्रयम् ॥ ११ ॥ श्रवणमननादिकाले सर्वजडवस्तुसाक्षात्कारो भूत-

प्रतिबन्धः । पापकर्मजनितकार्योन्नेयः वर्त्तमानप्रतिबन्धः । एकस्मिन्पुरुषे दयाविश्वासादिरूढशक्तिजनको यः प्रारब्धशेषः स आगामिप्रतिबन्धः । स तु जडभरतादिषु प्रसिद्धः । संयोगसमवाय आध्यासिकस्तादात्म्यसंबन्ध इति संबन्धत्रयम् ॥१२॥ अथवा कार्यकारणभावःविषयविषयिभावः, आधाराधेयभावश्चेति संबन्धत्रयम्, अथवा पदयोः सामानाधिकरण्यं पदार्थयोर्विशेषणविशेष्यभावः;प्रत्यगात्मलक्षणयोर्लक्ष्यलक्षणभावश्चेति संबन्धत्रयम् ॥ १३ ॥ लक्षणंतत्त्वमस्यादिवाक्यमित्यर्थः ॥

भा०–भूतप्रतिबंध १ वर्त्तमानप्रतिबंध २ आगामिप्रतिबंध ३ ऐसे ज्ञानके प्रतिबंधक ये तीन प्रतिबंध है ॥११॥ श्रवण मनन आदि कालमें संपूर्ण जड वस्तुओंका साक्षात्कार अनुभव रहना यह भूतप्रतिबंध है–पापकर्मसे उत्पन्न हुआ कार्य बढ़जावे यह वर्त्तमानप्रतिबंध है–किसी एक पुरुषमें दया विश्वास आदिसे आरूढशक्तिको–उत्पन्न करनेवाला जो अवशेष रहा प्रारब्ध है वह आगामि प्रतिबंध है सो तो जडभरत आदिकोंमें प्रसिद्ध ही है–संयोगसमवाय १ आध्यासिक २ तादात्म्य संबंध३, ऐसे तीन संबंध हैं ॥१२॥ अथवा कार्यकारणभाव १ विषयविषयिभाव २ आधाराधेयभाव ३ ये भी तीन संबंध कहे है; अथवा पदों २ में सामानाधिकरण्य १ पदार्थोंमें विशेषणविशेष्यभाव २ प्रत्यगात्मा और प्रत्यगात्माके लक्षणमें लक्ष्यलक्षणभाव संबंध ३ ऐसे तीन संबंध जानो। तत् त्वमसि इत्यादिक वाक्योंका लक्षण कहते है–इति ॥

इदं तत्त्वमसीतिवाक्यं- संबन्धत्रयेणाऽखंडार्थबोधकं भवति । संबन्धत्रयं नाम पदयोः सामानाधि-

करण्यं पदार्थयोः विशेपणविशेष्यभावः प्रत्यगात्म- लक्षणयोर्लक्ष्यलक्षणभावश्चेति । तदुक्तं च ।श्लोकः। सामानाधिकरण्यञ्च विशेपणविशेष्यता॥लक्ष्यलक्ष- णसंबन्धः पदार्थप्रत्यागात्मनाम्॥१॥इति॥सामाना- धिकरण्यसंबन्धस्तावद्यथा । सोयं देवदत्त इति वाक्ये तत्कालविशिष्टदेवदत्तवाचकशब्दस्य एत- त्कालविशिष्टदेवदत्तशब्दस्य चैकस्मिन्पिंडे तात्प- र्य्यसंबन्धः ॥ तथाच तत्त्वमसीतिवाक्ये परोक्ष- त्वादिविशिष्टचैतन्यवाचकतत्पदस्याऽपरोक्षत्वादि- विशिष्टचैतन्यवाचकत्वंपदस्य चैकस्मिश्चैतन्ये ता- त्पर्यसंबन्धः ॥ विशेपणविशेष्यभावसंबन्धस्तु ।

भा०–सो यह तत् त्वमसि ऐसा वाक्य तीनों संबंधो करके (अखंड) पूर्ण अर्थका बोधक है संबंध तीन वेही प्रसिद्ध है पदोंमें सामानाधिकरण्य१ पदार्थोंमें विशेषणविशेष्यभाव२ प्रत्यगात्मा और लक्षणमें लक्ष्यलक्षणभाव३

१ भिन्न भिन्न शब्दयोरेकस्मिन्नर्थे प्रवृत्तिः सामानाधिकरण्यम् ॥ २ व्यावर्त्तक विशेषणं व्यावर्त्यं विशेष्य तथाच सोय देवदत्त इतिवाक्ये एव सशब्दवाच्यो योसावेतत्कालैतद्देशसंबधाविशिष्टो देवदत्तपिंडः अय सइति तच्छब्दवाच्यैतत्कालैतद्देशसंबधाविशिष्टदेवदत्तपिंडाद्भिन्नानेति यदा प्रतीयते तदात- च्छब्दार्थस्यायशब्दवाच्यार्थनिष्ठभेदव्यावर्त्तकतया विशेषणत्वमयशब्दार्थस्य व्यावर्तकत्वाद्विशेष्यत्वम् । यदाच सइति तच्छब्दवाच्यतत्कालतद्देशविशिष्टो देवदत्तपिंडः सोयमितीदशब्दवाच्यादेतत्कालैतद्देशसंबधविशिष्टादस्माद्देवदत्त- पिंडाद्भिन्न इति यदा प्रतीयते तदा अयशब्दवाच्यस्य तच्छब्दार्थनिष्ठभे- दव्यावर्तकतया विशेषणत्व तच्छब्दार्थस्य व्यवर्त्यत्वाद्विशेष्यत्व तथा अय स एवायमित्यन्योन्यभेदव्यावर्त्तकतया सोयशब्दार्थयोः परस्परं विशेषण- विशेष्य इत्यर्थः ।

सो कहाभीहै श्लोकार्थः- सामानाधिकरण्य १ विशेषणविशेष्यभाव२लक्ष्य-लक्षण ३ ऐसे ये३ संबंध पदार्थोंके और प्रत्यगात्माके रहतेहैं ॥१॥ सो सामानाधिकरण्य संबन्ध पहले कहतेहैं जैसे-(सोयं देवदत्तः) यह वही देवदत्तहै इस वाक्यमें तिस पहले कालमें देखाहुआदेवदत्तके वाचक शब्दका और अब वर्त्तमानकालमें प्राप्तहुआ देवदत्त शब्दका एकही पिंडशरीर उसीशरीरमें तात्पर्यसंबंध है तैसे ही तत्त्वमसि इस वाक्यमें परोक्षत्व आदि विशिष्ट जो चैतन्य (ब्रह्म) का वाचक तत् पद है उसका और जो अपरोक्षत्व (प्रत्यक्ष) आदि विशिष्ट (त्वंके) चैतन्यका वाचक जो पद है उसका एकही चैतन्यमें तात्पर्य संबंधहै। इति। और विशेषणविशेष्यभाव संबंध तो आगे कहतेहैं।

यथातत्रैववाक्ये सशब्दार्थतत्कालविशिष्टदेवदत्तस्याऽयंशब्दार्थे तत्कालविशिष्टदेवदत्तस्य चान्योन्यभेदव्यावर्तकतया विशेषणविशेष्यंभावः तथा तत्त्वमसीतिवाक्येपि तत्पदार्थपरोक्षत्वादिविशिष्ट चैतन्यस्य त्वंपदार्थाऽपरोक्षत्वादिविशिष्टचैतन्यस्य चान्योन्यभेदव्यावर्तकतयाविशेषणविशेष्यभावः॥ लक्ष्यलक्षणसंबंधस्तु यथा तत्रैववाक्ये सशब्दायं शब्दयोस्तदर्थयोर्वा विरुद्धतत्कालैतत्कालविशिष्टत्वपरित्यागेनाऽविरुद्धदेवदत्तेन सह लक्ष्यलक्षणभावः॥

भा०-जैसे तहां ही वाक्यमें सशब्दका अर्थ तत्कालविशिष्ट जो देवदत्त है उसका और (सोयं) अयं शब्दका अर्थ जो एतत्कालविशिष्ट देवदत्त है उसका आपसमें भेदकी निवृत्ति होनेसे विशेषणविशेष्यभाव। तैसे ही तत् त्वमसि इस वाक्यमें तत्पदका अर्थ परोक्षत्वआदिविशि

चैतन्यका और त्वंपदका अर्थ अपरोक्ष (प्रत्यक्ष) त्वं आदि विशिष्ट चैतन्यका भेदकी (व्यावर्त्तकता,) निवृत्ति होनेसे विशेषण विशेष्यभाव संबंध है । लक्ष्यलक्षणसंबंध तो जैसे तिसी (सोयं देवदत्तः) वाक्यां सशब्द और अयं शब्द अथवा तिनके अर्थका विरुद्ध तत्काल और एतत् कालविशिष्टत्व धर्मके परित्याग करके अविरुद्ध देवदत्तकी साथ अर्थात् सोयं देवदत्तः इस वाक्यमें (स अयम्) इन शब्दशब्दयोंकाभेदहै देवदत्तका अभेदहै इस लिये यहां लक्ष्यलक्षणभाव संबंध है ।

तथाऽत्रापि तत्त्वंपदयोः तदर्थयोर्वाविरुद्धपरोक्षत्वादिविशिष्टत्वपरित्यागेनाऽविरुद्धचैतन्येन सह लक्ष्यलक्षणभावः । इयमेव जहदऽजहल्लक्षणा । अपरपर्य्याय एकांशपरित्यागेन एकांशस्य ग्रहणं भावलक्षणेत्युच्यते ॥ आध्यात्मिकं आधिभौतिकमाधिदैविकं चेति तापत्रयम् ॥ १४ ॥ आध्यात्म्यमाधिभूतमाधिदैवतमित्यध्यात्म्यादित्रयम् ॥ १५ ॥ आरंभपरिणामविवर्ताः कारणत्रयम् ॥ १६ ॥

भा०–तैसे यहां भी तत्त्वं इन पदोंका अथवा इनके अर्थोंका जो विरुद्ध परोक्षत्व आदि विशिष्टत्व धर्म है उसके परित्याग करके अविरुद्ध चैतन्यके साथ अर्थात् जैसे तत् त्वं इन पद पदार्थोंका भेद है चैतन्य वही है इसलिये यहां लक्ष्यलक्षणभाव संबंध है–यही जहत् अजहत् लक्षणा होती है । यह दूसरा पर्याय है कि एक अंशका परित्याग करके एक अंशका जहां ग्रहण हो सो भावलक्षणाभी कहलाती है–आध्यात्मिक१ आधिभौतिक २ आधिदैविक ३ येतीन ताप हैं १४–आध्यात्म्य१ आधिभूत २ आधिदैवत ३ ये अध्यात्म आदि तीन कहे हैं १५–और–आरंभ १ परिणाम २ विवर्त्त ३ ऐसे तीन कारण हैं ॥ १६ ॥

यथा दुग्धमेवदध्याकारं विपरिणमते तथा प्रकृतिप्रधानशब्दवाच्यामायैव जगदाकारं परिणामंगता इति प्रक्रिया सांख्यानांमते परिणामवादः ॥ यथा बहुमृत्कणिकासंमिलितोघटो यथा बहुतंतुसंमिलितः पटस्तथाबह्वणुसंमिलितं सत्जगदुत्पद्यते इति नैयायिकानांमते ॥ आरंभवादः चिद्विवर्त्तश्चिदेव इति वेदांतिकानांमते विवर्तवादः । सत्वरजस्तमांसीति गुणत्रयम् ॥ १७ ॥

भा०–जैसे दूधही दहीके आकार विकारको प्राप्त हो जाता है तैसेही प्रकृति प्रधान, इन शब्दोंसे वाच्य मायाहि जगत्के आकार हो विकारको प्राप्त हो रही है ऐसी यह प्रक्रिया सांख्यवालोंके मतमें है यही परिणाम वाद कहलाता है।जैसे बहुतसी मृत्तिकाकी किणकोंसे मिलके घट होता है और जैसे बहुत (तंतु) तागोंसे (पट) वस्त्र होता है तैसे बहुतसे अणुवोंसे मिलके जगत् उत्पन्न होता है ऐसे नैयायिकोंके मतमें आरंभवाद है। (चित्) चैतन्य ब्रह्मका विवर्त्त (आभास) (बिंब) (चित्) ब्रह्म स्वरूपही है ऐसे वेदांतियोंके मतमें विवर्त्तवाद है–सत्वगुण रजोगुण, तमोगुण ये तीन गुण है १७॥

भूतभविष्यद्वर्तमानकालाः कालत्रयम् ॥ १८ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः मूर्तित्रयम् ॥ १९ ॥ ज्ञाताज्ञानं ज्ञेयं ज्ञात्रादित्रयम् ॥ २० ॥ एतदेवत्रिपुटीत्युच्यते। त्रयाणां पुटानां प्रकाराणां ज्ञात्रादीनां समाहारः त्रिपुटीत्यर्थः । स्थूलप्रपंचः-सूक्ष्मप्रपंचः कारणप्रपंचश्चेति प्रपंचत्रयम् ॥ २१ ॥ पातालमर्त्यस्वर्गाः

लोकत्रयम् । एतदेव जगत्रयमितिचोच्यते ॥२२॥ संशयाऽसंभावनाविपरीतभावनां ज्ञानप्रतिबंधकत्रेयम् ॥ २३ ॥ लोकवासना देहवासना शास्त्रवासना चेति वासनात्रयम् ॥ २४ ॥ श्रवणमनननिंदिध्यासनानि श्रवणादित्रयम् ॥ २५ ॥

भा०—भूत, भविष्यत,वर्त्तमान, येतीन काल है।१८।ब्रह्मा,विष्णु,(महेश्वर, शिव ये तीन मूर्त्ति है॥१९॥(ज्ञाता,)जाननें वाला, ज्ञान, २ (ज्ञेय)। जाननें योग्यपदार्थ ये तीन ज्ञात्रादिक है ॥२०॥ यही त्रिपुटी कहाती है तीन पुटोंका (ज्ञाता आदि प्रकारोंका जहां संचय हो सो त्रिपुटी कहिये स्थूल प्रपंच, सूक्ष्म प्रपंच, कारण प्रपंच, ऐसे तीन प्रकारका प्रपंच होता है ॥ २१ ॥ पाताल, मृत्यु,स्वर्ग ये तीन लोक है यही जगत्रय कहलाता है॥२२॥संशय,१असंभावना २ विपरीतभावना ३ येतीन ज्ञानके प्रतिबंध कहे ॥२३॥ लोकोंकी वासना१देहकी वासना,२शास्त्रकी वासना ३ ये तीन वासना है– ॥ २४ ॥ श्रवण १ मनन २ निदिध्यासन ३ ये तीन श्रवणादिक है ॥ २५ ॥

सर्वसंशयनिवर्तकंश्रवणम् । मननं मनसंभावनानिवर्तकम् ॥ निदिध्यासनं तु विपरीतभावनानिवर्तकमिति विवेकः ॥ ज्ञानं वैराग्यमुपरतिश्चेति ज्ञानादित्रयम् ॥ २६ ॥ हेतुस्वरूपकार्य्याणि हेत्वादित्रयम् ॥ २७ ॥ ज्ञानस्य हेतुः श्रवणादित्रयम् । अहं देहेंद्रियाद्यतिरिक्तः साक्षी प्रतीयमानप्रपंचोप्यसत्य इति दृढनिश्चयोज्ञानस्य स्वरूपम् । अत्रनिश्चयस्य दार्ढ्यं नाम संशयादिराहित्यम् ॥

भा०-संपूर्ण संदेहोंकी निवृत्ति करै ऐसा श्रवण कहा है. मनकी भावना (संशय) को निवृत्त करनेंवाला मनन है, और निदिध्यासन आमतों विपरीतभावनाको दूर करनेंका है ऐसा विवेक है ॥ ज्ञान, वैराग्य, उपरति, ये तीन ज्ञान आदिक है॥२६॥-हेतु १ स्वरूप २ कार्य ३ ये तीन हेत्वादिक कहाते है॥२७॥(जैसे) ज्ञानके हेतु श्रवणादिक तीन (श्रवण १ मनन २ निदिध्यासन ३ , है(अहं) में देह, इंद्रिय, आदिकोंसे न्यारा साक्षीहूं (प्रतीयमान) यह दीखता हुआ सब प्रपंचभी असत्य है ऐसा दृढ निश्चय ज्ञानका स्वरूप है। यहां निश्चयकोभी जो दृढपना कहा है सो संशय आदि रहित निश्चयका नाम जानना।

अनात्मस्वात्मत्वबुद्धयऽभावोज्ञानकार्य्यमिति विवेकः॥वैराग्यस्य हेतुर्विषयेषु दोषदृष्टिः॥वांताशनवद्धेयताबुद्धिः स्वरूपं पुनराशाऽभावः कार्य्यमिति भावनीयम्। उपरतेर्हेतुः यमनियमादि ॥ चित्तनिरोधः स्वरूपं सर्वव्यवहारनाशः कार्य्यमिति हेतु स्वरूपकार्य्याणि ज्ञानवैराग्योपरतीनां विज्ञेयानि ॥. वैराग्यस्याऽवधिर्ब्रह्मलोकतृणीकारः। अज्ञानकालेदेहादावात्मत्वविषयिणी दृढा बुद्धिर्यथातथा तदप्रतीतिपूर्वकमहं ब्रह्मेति दृढनिश्चयः बोधस्यावधिः ॥

भा०-देह आदिक, अनात्म वस्तुओंमें अपने आत्मापनकी बुद्धिका अभावको ज्ञानका कार्य कहते-हे ऐसा विवेक है-वैराग्यका हेतु यह है, विषयोंमे दोषकी दृष्टि करना और वमन किये हुए भोजनकी तरह विषयोंके त्यागकी बुद्धि वैराग्यका स्वरूप है, फिरभी आशा नहीं करनी यह कार्य है ऐसे विचारना-उपरतिका हेतु यम नियम आदि हैं और स्वरूप (चित्तनिरोध) चित्त वशमें करना है-संपूर्ण व्यवहार चेष्टाका

नाश करना (उपरतिका) कार्य है–इस प्रकारसे ज्ञान, वैराग्य, उपरा इनके हेतु, स्वरूप, कार्य, जानने ॥ वैराग्यकी अवधि ब्रह्मलोकपर्यं तृणवत् समझना और अज्ञानकालमें जो देह आदिकोंमें (आत्मत्व आत्मापनके विषयवाली दृढ बुद्धि होजावे तब जैसे तैसे उसको दू करके(अहं ब्रह्म) मैं ब्रह्मस्वरूपहूं ऐसा दृढ निश्चय करना यह बोधकी अवधि है–

सुषुप्तिवत्समस्तवस्तुविस्मृतिरुपरतेरवधिरितिविज्ञेयम् । प्राणनिग्रहोपाया रेचकपूरककुंभकाःप्राणायामत्रयम् ॥२८॥ नेत्रधर्म्माऽऽध्यमांद्यपटुत्वान्यांध्यादित्रयम् ॥ २९ ॥ सहजतादात्म्यं कर्मजन्यतादात्म्यं भ्रांतिजन्यतादात्म्यमिति अहंकारस्य चिच्छायादेहसाक्षिभिस्तादात्म्यत्रयम् ॥ ३० ॥ तत्र चिच्छायया सह यदहंकारस्य तादात्म्यं तत्सहजम्। यच्च देहेन सह अहंकारस्य तादात्म्यं तत्कर्मजम् ॥ यत्साक्षिणा सह तद्भ्रांतिजम् ॥

भा०–सुषुप्ति अवस्थाकी तरह संपूर्ण वस्तुओंकी विस्मृति होना उपरतिकी अवधि है ऐसे जानना–प्राणोंका निग्रहके उपाय रेचक, पूरक, कुंभक, ये तीन प्राणायामहै॥२८॥नेत्रके धर्म (आंध्य) अंधापन (मांद्य) स्वल्पदीखना (पटुत्व,) अच्छी तरह दीखना, ऐसे ये तीन है ॥२९॥ सहजतादात्म्य, कर्मजन्य तादात्म्य, भ्रांतिजन्यतादात्म्य ऐसे अहंकारके (चिच्छाया) चिदाभास देह, साक्षी, इनके साथ तीन तादात्म्य, संबंध रहते है ॥३०॥ तहां चिच्छायाके साथ जो अहंकारका तादात्म्य संबंध है सो सहज कहाहै, और देहके साथ जो अहंकारका तादात्म्य संबंध है सो कर्मज अर्थात् कर्मोंसे हुआ है, और साक्षी अर्थात् जीव

संज्ञक आत्माके साथ जो अहंकारका संबंध है सो भ्रांतिज अर्थात् भ्रांति करके हो-रहा है ॥

अथास्य निवृत्तिः ॥ संबंधिनोः चिच्छायाहंकारयोः सतोः विद्यमानयोः सहजस्य निवृत्तिर्न भवति संबंधिनाशे निवृत्तिरस्तीत्यर्थः ॥ यथा शरावोदकनिमित्तोदयस्य सवितृप्रतिबिंबस्य शरावोदकनिवृत्त्या निवृत्तिवदित्यर्थः। यत्तु शरीराहंकारयोस्तादात्म्यं तत्कर्मक्षयान्निवर्तते यश्च आत्माहंकारयोस्तादात्म्यं तत्प्रबोधान्निवर्तते।ब्रह्मात्मतत्त्वसाक्षात्कारात्रिविधमपितादात्म्यं युगपदेवनिवर्तते ॥

भा०-अब इस (साक्षी) जीवकी निवृत्तिको कहते हैं-कि संबंधवाले चिच्छाया) चिदाभास और अहंकार इन दोनुओंके साक्षात् विद्यमान हुए न्ते सहज जो संबंध है उसकी निवृत्ति नहीं होगी और जब संबंधवालोंकी नेवृत्ति होजागी तब निवृत्ति होजावेगी; जैसे कि-सराईमें घाले हुए जलके निमित्त करके उदय हुए सूर्यके प्रतिबिंबका नाशसराईके जलकी निवृत्ति होनेसे होता है तैसे ही (यह सहज संबंध अहंकारके नाश होने से होगा) और जो शरीरके संग अहंकारका तादात्म्य संबंध है वहतो कर्म नष्टहोते ही निवृत्त होता है और ब्रह्म आत्मतत्वके साक्षात्कार होनेसे तो यह तीनों प्रकारकाही तादात्म्य संबंध एकहीवार (निवृत्त) दूर हो जाता है।

अज्ञानादेवाहमित्यात्मपरिच्छेदो भवति प्रबोधेनाऽज्ञाननिवृत्तावपरिच्छिन्न एवात्माहमिति चोच्यते । पुत्रैषणा वित्तैषणा लोकैषणा चेत्येषणात्रयम्॥३१॥ सुषुप्तिमूर्च्छासमाधयः सुषुप्त्यादित्रयम्॥३२॥विपर्यासक्तिः १ प्रज्ञामांद्यं २ कुतर्कः ३ विपर्ययदुरा-

ग्रह ४ श्रेतिज्ञानेवर्तमानप्रतिबंधकचतुष्टयम् ॥ १ ॥ विषयेरूढासक्तिर्विषयासक्तिः । बोधितस्यार्थस्य बुद्ध्याऽग्रहणं प्रज्ञामांद्यम् ॥

भा०–अज्ञानसेही (अहं) मैहूं ऐसा आत्मासे (परिच्छेद१) अलग होता है, जब (प्रबोध) ज्ञान होता है तब अज्ञानकी निवृत्तिमें (अपरिच्छिन्न) परिच्छेदरहित ही मैं (आत्मा) ब्रह्महूं ऐसा कहा जाता है ॥ पुत्रैषणा १ वित्तधनकी एषणा (इच्छा) लोककीएषणा ऐसे ये तीन एषणा अर्थात् इच्छा है॥३१॥सुषुप्ति मूर्च्छा समाधि ये सुषुप्ति आदि तीन अवस्था है॥३२॥विषयासक्ति १ प्रज्ञामांद्य २ कुतर्क ३ विपर्ययदुराग्रह ४ ये चार ज्ञानविषें वर्त्तमान प्रतिबंधक रहते हैं–१ विषयमें रूढ लगी हुई आसक्ति रहना यह विषयासक्ति है, और (बोधित) बोध करा ये हुए अर्थका भी बुद्धि करके ग्रहण नहीं करना यह प्रज्ञामांद्य कहलाता है ॥

प्रतिपादितस्यार्थस्य विपरीतग्रहणं कुतर्कः । अहं श्रोत्रियः पंडितोऽहं विरक्तोऽहमिति देहेंद्रियादावात्मत्वबुद्धिर्विपर्ययदुराग्रहः । शमादिषट्केन विषयासक्तेर्निवृत्तिः श्रवणेन प्रज्ञामांद्यस्य मनने । कुतर्कस्य निदिध्यासनेन विपर्ययदुराग्रहस्येति विवेकः । धर्मार्थकाम मोक्षाः पुरुषार्थचतुष्टयम् ॥२॥ जातिगुणक्रियासंबन्धाः शब्दप्रवृत्तिनिमित्तचतुष्टयम् । ३ शब्दप्रवृत्तिनिमित्तानां तेषां ब्रह्मण्यऽसत्त्वेन तस्मिन् शब्दाऽप्रवृत्तिरिति विभावनीयम् ॥

भा०–कहे हुए अर्थको (विपरीत) उलटे प्रकारसे ग्रहण करै वह कुतर्क

१ यथा गौः शुक्ला धावति इत्यत्र जाति गुण क्रिया संबधाः तथैव सर्वत्रेदम् ।

कहाताहै—में विद्वान् हूं (पंडित) ज्ञानवान् हूं विरक्त हूं ऐसा देह इंद्रिय आदिकों विषे आत्मत्व बुद्धि करना यह विपर्यय दुराग्रह कहाताहै. शम आदिक छहों करके विषयासक्तिकी निवृत्ति होतीहै, श्रवण करके अज्ञानांधकी निवृत्ति, मनन करके कुतर्ककी, निदिध्यासन करके विपर्यय दुराग्रहकी निवृत्ति होतीहै ऐसा विवेकहै ३। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, यह पुरुषार्थचतुष्टय, चार पुरुषार्थ हैं २। जाति, गुण, क्रिया, संबंध, ये चार शब्दकी प्रवृत्तिमें निमित्तहै३।इनशब्दप्रवृत्तिनिमित्तोंका ब्रह्ममें अभाव है इस लिये तिस ब्रह्मविषे शब्दाप्रवृत्ति अर्थात् शब्दकी प्रवृत्तिही नहीं है ऐसी (भावना) विचारना चाहिये।

ब्रह्मक्षत्रियवैश्यशूद्रा इति वर्णचतुष्टयम् ४। ब्रह्मचर्याश्रमः गृहस्थाश्रमः वानप्रस्थाश्रमः यत्याश्रमश्चेत्याश्रमचतुष्टयम् ५। नित्यानित्यवस्तुविवेकः इहामुत्रार्थफलभोगविरागः शमादिषट्संपत्तिः मुमुक्षुत्वं चेति साधनचतुष्टयम् ६। विषयप्रयोजनसंबन्धाऽधिकारिणः अनुबन्धचतुष्टयम्। तद्यथा साधनचतुष्टयसंपन्नप्रमाताधिकारी, विषयो जीवब्रह्मैक्यं, शुद्धं चैतन्यं प्रमेयम् तत्रैव वेदांतानां तात्पर्यात्। संबन्धस्तु तदैक्यप्रमेयस्य तत्प्रतिपादकोपनिषत्प्रमाणस्य च बोध्यबोधकभावलक्षणः इति॥७॥

भा०–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ये चार वर्णहैं ४।ब्रह्मचर्य आश्रम १ गृहस्थाश्रम २ वानप्रस्थाश्रम ३ यति आश्रम ये चार आश्रमहैं ५। नित्य अनित्य वस्तुका विवेक, इसलोक और परलोकके फलभोगोंका त्याग, शम आदिक छहसंपत्ति, मुमुक्षुत्वधर्म, ये चार साधन (साधन चतुष्टय) है ६।विषय, प्रयोजन, संबंध, अधिकारी यह (अनुबंधचतुष्टय)

चार अनुबंधहै ६। सो ऐसेहै कि इन चार साधनोंसे युक्तहुआ (प्रमाता) मुमुक्षुजन अधिकारी है जीवब्रह्मकी ऐक्यता यह विषयहै, शुद्ध चैतन्य परमात्मा प्रमेयहै; तहांही वेदान्तशास्त्रोंका तात्पर्य्य होनेसे संबंधतो तिस जीवकी अरु प्रमेयकी ऐक्यताका और तिस ऐक्यताको प्रतिपादन करनेवाले वेदप्रमाणका बोध्यबोधकभावलक्षण है ॥ ७ ॥ इति ॥

प्रयोजनं तु तदैक्यप्रमेयगताऽज्ञाननिवृत्तिः स्वरूपानंदावाप्तिश्च मनोबुद्ध्यऽहंकारचित्तान्यन्तःकरणचतुष्टयम् ८ । संकल्पाध्यवसायाऽभिमानाऽनुसंधानानि संकल्पादिचतुष्टयम् ९ । संकल्पवृत्तिरूपेण परिणतमंतःकरणं । मनः । मननात्मकं वा मनः । संकल्पवृत्तिहेतुर्वा मनः संकल्पः१ निश्चयाख्यवृत्तिरूपेण परिणतमंतःकरणं बुद्धिः।निश्चयात्मिका वा बुद्धिः । निश्चयहेतुर्वा बुद्धिः अध्यवसायः २ अभिमानवृत्तिरूपेण परिणतांतःकरणमहंकारः अभिमानात्मको वाऽभिमानकरो वा ३ पूर्वोत्तरानुसंधानरूपवृत्तिमदंतःकरणचित्तमअनुसंधानात्मकं वा अनुसंधानकरं वाऽनुसंधानम् ४ ॥

भा०-प्रयोजन तहां तिस जीवब्रह्मकी ऐक्यता, (प्रमेय) शुद्ध चैतन्यमें प्राप्त हुए अज्ञानकी निवृत्ति और अपनें स्वरूपके आनंदकी प्राप्ति है मन बुद्धि, अहंकार, चित्त, यह अंतःकरणचतुष्टय, अर्थात् चार प्रकारका अंतःकरण है ८।संकल्प १ अध्यवसाय२ अभिमान ३ अनुसंधान ४ ये चार संकल्प आदिक है ९ -संकल्पवृत्तिरूप करके विकारको प्राप्त हुआ अंत करण मन होना, अथवा मननरूप मन अथवा संकल्पवृत्तिका हेतुरूप मन संकल्प कहलाता है १ निश्चय नामक वृत्तिरूप

करके विकारको प्राप्त हुई अंतःकरणवृद्धि अथवा निश्चयात्मिका बुद्धि अथवा निश्चयका हेतुरूप बुद्धि अध्यवसाय कहलाता है २ अभिमान वृत्तिरूप करके विकारको प्राप्त हुआ अंतःकरण, अहंकार अथवा अभिमान स्वरूप अहंकार अथवा अभिमानको करने वाला अहंकार अभिमान है ३ पूर्व उत्तरका अनुसंधान रूप. वृत्तिवाला अंतःकरण चित्त अथवा अनुसंधानात्मक अर्थात् ऐसे करना एवं विचारात्मक अथवा अनुसंधानको करनेवाला चित्त अनुसंधान है ॥ ४ ॥

ऋग्यजुःसामाथर्वाणः वेदाः वेदचतुष्टयम् ॥ १० ॥ प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणचतुष्टयम्॥११॥ लयविक्षेपकषायरसास्वादाः समाधिविघ्नचतुष्टयम् ॥ १२ ॥ लयस्तावदखंडवस्त्वऽनवलंबनेन चित्तवृत्तेर्निद्रा, अखंडवस्त्वनवलंबनेन चित्तवृत्तेरन्यावलंबनं विक्षेपः । लयविक्षेपाभावेपि चित्तवृत्तेरागादिवासनया स्तंभीभावादखंडवस्त्वनवलंबनं कषायः। अखंडवस्त्वऽनवलंबनेपि चित्तवृत्तेः सविकल्पानंदाऽऽस्वादनं रसास्वादः समाध्यारंभसमये सविकल्पानंदास्वादनं वा ॥ मैत्री, करुणा, मुदितोपेक्षा मैत्र्यादिचतुष्टयम् ॥ १३ ॥

भा॰-ऋक् १ यजु २ साम ३ अथर्ववेद ४ ये चार वेद है ॥ १० ॥ प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ये चार प्रमाणहैं ॥११॥ लय, विक्षेप, कषाय, रसास्वाद, ये चार समाधिके विघ्नहैं ॥ १२ ॥ तहां (अखंड) परिपूर्ण वस्तुका (अनवलंबन) आश्रय नहींकरनेसे चित्तकी वृत्तिको (निद्रा) आलस्यहोना लय कहा है १ अखंडवस्तु (ब्रह्म) का अवलंबन नहीं करनेसे चित्तकी वृत्ति अन्यवस्तुका अवलंबन करलेवे यह विक्षेप

है २ लय, विक्षेप इन दोनुर्षोंके अभावमें भी राग (स्नेह) आदि वासना करके चित्तकी वृत्तिका (स्तंभीभाव) बन्दहोनेसे रुकनेसे अखंड वस्तु (ब्रह्म) का अवलंबन (प्राप्ति) नहीं होना कषाय है ३ अखंडवस्तुके अवलंबन (प्राप्ति) हुए विनाही चित्तकी वृत्तिको सविकल्प आनन्द अर्थात् ब्रह्माहमस्मि इत्यादिक विकल्प आनन्दके स्वादको रसास्वाद कहतेहैं अथवा समाधिके आरंभसमयमेंही यह सविकल्प आनन्दक स्वाद होनेको रसास्वाद विघ्न जानो ४। मैत्री १ करुणा२ मुदिता३ उपेक्षा ४ ये चार मैत्री आदिक हैं ॥ १३ ॥

जरायुजांडजस्वेदजोद्भिज्जानि भूतग्रामचतुष्टयम् ॥ १४ ॥ ब्रह्मविद्वरवरीयोवरिष्ठा इति ब्रह्मविदादिचतुष्टयम् ॥ १५ ॥ अन्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानंदमयाः पंच कोशाः ॥ १ ॥ श्रोत्रत्वचक्षुर्जिह्वाघ्राणानि ज्ञानेंद्रियपंचकम् ॥ २ ॥ शब्दस्पर्शरूपरसगंधाः शब्दादिपंचकम् ॥ ३ ॥ वाक्पाणिपादपायूपस्थाः कर्मेंद्रियपंचकम् ॥ ४ ॥ वचनादानगमनविसर्गानंदाः वचनादिपंचकम् ॥५॥ प्राणापानव्यानोदानसमानाः पंचप्राणाः ॥ ६ ॥ नागकूर्मकृकलदेवदत्तधनंजयाः पंचोपवायवः ॥ ७ ॥ नित्यनैमित्तिकप्रायश्चित्तकाम्यनिषिद्धानि कर्मपंचकम् ॥ ८ ॥

भा०–जरायुज, अंडज, स्वेदज, उद्भिज्ज, यह भूतग्रामचतुष्टय कहाहै ॥ १४ ॥ ब्रह्मवित् १ ब्रह्मविद्वर २ ब्रह्मविद्वरीय ३ ब्रह्मविद्वरिष्ठ ४ ये ब्रह्मवित् आदि ४ हैं अर्थात् उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं ॥ १५ ॥ अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय, आनंदमय, ये पांच कोश हैं ॥ १ ॥

श्रोत्र१ त्वचा २ चक्षु ३ जिह्वा ४ (नासिका) घ्राण ५ ये पांच ज्ञान इंद्रिय हैं ॥२॥ शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये शब्दादिक पांच हैं (अर्थात् इन इंद्रियनके विषय हैं) ॥ ३ ॥ वाणी, हाथ, पैर, गुदा, लिंग, ये पांच कर्म इंद्रिय हैं ॥ ४ ॥ वचन, आदान, (ग्रहण करना) गमन, विसर्ग (मलत्याग) आनंद, ये वचन आदिक पांच हैं अर्थात् इन कर्मइंद्रियनके विषय हैं ॥ ५ ॥ प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, ये पांच प्राण हैं ॥ ६ ॥ नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय, ये पांच उपवायु हैं ॥ ७ ॥ नित्य, नैमित्तिक, प्रायश्चित्त, काम्य, निषिद्ध, ऐसे पांच प्रकारके कर्म होते हैं ॥ ८ ॥

नित्यानि अकरणे प्रत्यवायसाधनानि संध्यावंदनादीनि १ नैमित्तिकानि पुत्रजन्माद्यनुबंधीनि जातेष्ट्यादीनि २ प्रायश्चित्तानि पापक्षयसाधनानि कृच्छ्रचांद्रायणादीनि ३ काम्यानि स्वर्गादीष्टसाधनानि ज्योतिष्टोमादीनि ४ निषिद्धानि नरकाद्यनिष्टसाधनानि ब्रह्महत्यादीनि इति विवेकः ॥ शब्दतन्मात्रस्पर्शतन्मात्ररूपतन्मात्ररसतन्मात्रगंधतन्मात्राणि सूक्ष्मभूतानि पंच ९ पंचीकृतानि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशानि पंच स्थूलभूतानि ॥१०॥ अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः पंचयमाः ॥ ११ ॥ शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि पंच नियमाः ॥ १२ ॥

---

१ आकाशवाय्वग्निजलपृथिव्य इति । २ पंचीकृतानीति द्विधा विधाय चैकैकं चतुर्द्धा प्रथमं पुनः स्वस्वेतरद्वितीयांशैर्योजनात्पंच पंचते इति १ पंचीकरणम् ॥

भा०–जो कर्मोंकेनहीं करनेंमें दोषको सिद्ध करनें वाले हैं ऐसे संध्या वंदन आदिक नित्यकर्म हैं ॥ १ ॥ और पुत्रके जन्म आदिके नियम वाले(जातेष्टि)जातकर्म आदि नैमित्तिक कर्म हैं॥२॥जो पापके क्षय करनें वाले कृच्छ्रचांद्रायण आदि हैं वे प्रायश्चित्त कर्म हैं॥ ३॥स्वर्गादिक इष्ट साधक ज्योतिष्टोमयज्ञ आदिकर्म काम्यकर्म कहेहैं ॥४॥ नरक आदि बुरे फलको सिद्ध करनेवाले ब्रह्महत्या आदिकर्म निषिद्ध कहेहैं ॥ ५ ॥ ऐसा विवेक है–शब्दतन्मात्र १ स्पर्शतन्मात्र २ रूपतन्मात्र ३ रसतन्मात्र ४ गंधतन्मात्र ५ ये पांच सूक्ष्मभूत, (तत्वं) हैं. पंचीकरण किये हुए पृथिवी १ जल २ अग्नि ३ वायु ४ आकाश ५ ये पांच स्थूलभूत, (तत्व) कहलातेहैं॥१०॥ अहिंसा १ असत्य २ अस्तेय ३ ब्रह्मचर्य [illegible] अपरिग्रह ५ ये पांच यमहैं (अर्थात् हिंसा न करना ॥ ११ ॥ १ असत्य न बोलना २ चोरी न करना ३ ब्रह्मचर्यमें रहना४ संग्रह न करना५। शौच १ संतोष २ तप ३ स्वाध्याय ४ (वेदका पठन पाठन) ईश्वरकी प्रार्थना ये पांच नियम हैं ॥ १२ ॥

क्षिप्तं मूढं विक्षिप्तमेकाग्रं निरुद्धमिति पंच भूमयः ॥ १३ ॥ यल्लोकशास्त्रदेहवासनासु वर्त्तमानं चित्तं क्षिप्तभूमिका, निद्रातंद्रादिग्रस्तं चित्तं मूढभूमिका, कदाचिज्ज्ञानयुक्तं चित्तं क्षिप्ताद्विशिष्टं तथा विक्षिप्तभूमिका, तत्र क्षिप्तमूढयोः समाधित्वशंकैव नास्ति, विक्षिप्ते तु समाधित्वशंका । इतरभूमिद्वये समाधिःएकाग्रे मनसि सद्भूतमर्थं प्रद्योतयति प्रक्षिणोति च क्लेशान् कर्मबंधनानि श्लथयति निरोधमभिमुखीकरोतीति संप्रज्ञातो योगः एकाग्रभूमिका ॥

भा०–क्षिप्त १ मूढ २ विक्षिप्त ३ एकाग्र ४ निरुद्ध ५ ऐसे ये पांच भूमिकाहैं ॥१३॥ जोलोक, शास्त्र देह इत्यादिकोंकी वासनामें चित्त वर्त्त-

मान है वह क्षिप्तभूमिकाहै १ निद्रा आलस्य आदिकसे चित्त ग्रसितहो रहता है यह मूढभूमिका है २ कभी ज्ञानयुक्त चित्त होजाना और क्षिप्त भूमिकासे कछु विशेष (उत्तम) ऐसी विक्षिप्त भूमिकाहै ३ तहां क्षिप्त और मूढभूमिकामें तो समाधि होनेकी शंकाही नहीं है अर्थात् कभी नहीं होती है—और विक्षिप्तभूमिकामें समाधिभावकी शंकाहै—और अन्य दो (एकाग्र, निरुद्ध) भूमी तो समाधिही है—एकाग्रमें प्राप्तहुआ मन, सत् अर्थको प्रकाशितकरै और क्लेशोंको नष्टकरै, कर्मबंधनोंको शिथिलकरै १ निरोधभावको सन्मुखकरै अर्थात् मन वशमें होवे ऐसा संप्रज्ञातयोग एकाग्र भूमिका कहीहै ॥ ४ ॥

सर्ववृत्तिनिरोधरूपाऽसंप्रज्ञातसमाधिः निरुद्धभूमिका॥ नित्यप्रलयः अवांतरप्रलयः दैनंदिनप्रलयः ब्रह्मप्रलयः आत्यंतिकप्रलयश्चेति पंच प्रलयाः ॥ १४ ॥ प्राणिनांसुषुप्तिः नित्यप्रलयः ॥ चतुर्युगसहस्राणि ब्रह्मणोदिनमुच्यते इति ब्रह्मण एकस्मिन्नहनि चतुर्दशमनूनां चतुर्दशेंद्राणां चाधिपत्यमेकस्याऽपगते अन्यस्य प्राप्ते सति आधिपत्यानुकूलपर्यंतं तस्मिन्समये चतुर्दशाऽवांतरप्रलया इत्युच्यंते ॥

भा०—संपूर्ण वृत्तियोंका निरोधरूपवाली असंप्रज्ञात समाधि जो है वह निरुद्धभूमिका कहीहै । नित्य प्रलय, १ अवांतर प्रलय, २ दैनंदिन प्रलय, ३ ब्रह्मप्रलय, ४ आत्यंतिकप्रलय, ५ ऐसे ये पांच प्रलय हैं ॥ १४ ॥ प्राणियोंकी जो सुषुप्ति अवस्थाहै वह नित्यप्रलय कहीहै, और चार हजार युगोंका ब्रह्माजीका दिन होताहै ऐसे ब्रह्माजीके एक दिनमें चौदह मनुवोंका और चौदह इंद्रोंका आधिपत्य (राज्य) होता है सो एकके आधिपत्य दूरहोनेमें दूसरेके प्राप्तहोनेमें तिस आधिपत्यके अनुकूलपर्यंत तिससमय चौदह अवांतर प्रलय होतीहै ॥

तेषां नैमित्तिकप्रलय इति मन्वंतरप्रलय इति च संज्ञा एतेषु युगप्रलयानामंतरभावः । ब्रह्मणः सुषुप्तिः दैनंदिनप्रलयः ॥ ब्रह्मणो नाशावस्था ब्रह्मप्रलयः तदानीमाकाशादिप्रपंचरहितं सज्ज्ञानमात्रं वर्तते, ब्रह्मप्रलयस्य महाप्रलय इति संज्ञा प्राकृतप्रलयः सुषुप्तिरिति च मुक्तावऽस्था आत्यंतिकप्रलयः ॥ तत्समये अज्ञानस्य सर्वात्मना अभावः इति पंच प्रलयाः ॥ जीवात्मा परमेश्वरात् भिन्नः १ आत्मनि प्रतीयमानं कर्तृत्वादिवास्तवं २ शरीरत्रयावच्छिन्नात्मसंगी ३ जगत्कारणत्वेन ब्रह्मणो विकारित्वं ४ कारणाद्भिन्नस्य प्रपंचस्य सत्यत्वम् ५ इति पंचभ्रमाः ॥ १५ ॥

भा०–तिनकी नैमित्तिक प्रलय, ऐसी और मन्वंतर प्रलय ऐसी संज्ञाहै, इन्होंमेंही युगप्रलयोंकाभी अंतरभाव जानलेना । ब्रह्माजीकी जो सुषुप्ति (सोनेकी) अवस्था है वह दैनंदिन प्रलय है, ब्रह्माजीकी नाश (अवस्था पूरी होनेंकी) समय है सो ब्रह्मप्रलय है तिस समय आकाश आदि प्रपंचरहित सत् ज्ञानमात्र वर्त्तता है, ब्रह्मप्रलयकी महाप्रलय संज्ञा और प्राकृत प्रलय तथा सुषुप्ति ऐसीभी संज्ञा है, मुक्तअवस्था आत्यंतिक प्रलय है तिस समय अज्ञानका सब प्रकारसे अभाव होजाता है– इति पंच प्रलयाः । जीवात्मा परमेश्वरसे भिन्न है १ आत्मामें प्रतीत होताहुआकर्त्तापन आदि वास्तव (सिद्धांतही) है २ तीनों शरीरोंसे अवच्छिन्न (युक्त हुआ) आत्मा संग वाला है ३ जगत्का कारण होनेसे ब्रह्मके विकारभाव है ४ कारणसे भिन्नहुआ प्रपंच (जगत्) को भी सत्यपना है ५ ऐसे ये पांच भ्रम कहलाते है अर्थात् वृथा ५ भ्रम होतेंहै ।

बिंबप्रतिबिंबदृष्टांतेन भेदभ्रमो निवर्तनीयः १ स्फटिकलोहितदृष्टांतेन पारमार्थिककर्तृत्वभ्रमो निवर्तनीयः२सूर्याऽग्न्युत्पादकाऽऽदर्शदृष्टांतेन विकारित्वभ्रमो निवर्त्तनीयः ३ घटाकाशदृष्टांतेन संगीतिभ्रमोनिवर्त्तनीयः ४स्वर्णकटकलोहखड्गादिदृष्टांतेन कारणाद्भिन्नत्वेन प्रतीयमानप्रपंचस्य सत्यत्वभ्रमो निवर्तनीयः ५ इति पंचभ्रमनिवर्तकदृष्टांतपंचकम् ॥ १६ ॥ ब्रह्मणि जगत् भ्रांत्या प्रतीयते इत्यत्र शुक्तौ रजतं १ रज्जौ सर्पः २ स्थाणौ पुरुषः ३ गगने नीलतादि ४ मरीचिकायां जलम् ५ इति दृष्टान्तपंचकम् ॥१७॥ आत्मख्यातिरसत्ख्यातिरख्यातिरन्यथाख्यातिरनिर्वचनीयख्यातिश्चेति पंचख्यातयः ॥ १८ ॥

भा०–बिंबप्रतिबिंबके दृष्टांत करके जैसे सूर्यके बिंबसे जलमें गिरा हुआ प्रतिबिंब भिन्न नहीं है एसा भेदभ्रम दूर करना ॥१॥ मणिमें(काचमें) जैसे दूसरी वस्तुका लाल रंग दीखताहै इस दृष्टांत करके आत्माका कर्तापनभ्रम दूर करना ॥ २ ॥ जैसे सूर्य और अग्निको उत्पन्न करनेवाला सीसा (चकमक) इन दोनुवोंके योगसे अग्नि उत्पन्न होता है तहां सूर्य कारण है सो विकाररहित है विकारवान् सीसाही है. ऐसे मायाही विकारवाली है इस दृष्टांत करके विकारित्व भ्रम दूर करना ॥ ३ ॥ जैसे घटके आकाशमें महाकाश बंधा नहीं है इस घटाकाश दृष्टांत करके संगी (संगपनाका) -भ्रम दूर करना ॥ ४ ॥ सुवर्णके कडूले लोहाकी तलवार जैसे सोना लोहासे भिन्न सत्य नहीं है किंतु सोना लोहा रूपही है इस दृष्टांत करके कारणसे भिन्नपना करके प्रतीत होते हुए जगत्का सत्यत्व (सत्यपनाका) भ्रम निवर्त करना ॥ ५ ॥ इति पंच-

भ्रमनिवर्त्तक दृष्टांतपंचक ॥ १६ ॥ ब्रह्मविषे जगत् भ्रांति करके प्रतीत होता है इसमे जैसे सीपमें चांदी१ रज्जुमें सर्प २ स्थाणु (थंभे)में पुरुष, ३ आकाशमें नीलवर्ण आदि रंग ४ मरीचिका (चिमकता हुआ कालरमें जल) ५ ये सब मिथ्या हे (इसी तरह जगत्भी मिथ्या है) ऐसे ये पांच दृष्टांत हे ॥ १७ ॥ आत्मख्याति १ असत्ख्याति २ अख्याति, ३ अन्यथा ख्याति ४ अनिर्वचनीयख्याति ५ इन नामोंवाली पांच ख्याति कहलाती हे ॥ १८ ॥

अख्यातिमतं सांख्यप्रभाकरयोः अन्यथाख्यातिमतं भाट्टवैशेषिकयोः आत्मख्यातिमतं विज्ञानवादिनः असत्ख्यातिमतं शून्यवादिनः अनिर्वचनीयख्यातिमतं वेदांतवादिनः इति ॥ एकरसवस्तुमात्रत्वेन चित्तस्य तदाकारवृत्तिविशेषाऽवस्थानं संप्रज्ञातसमाधिः सच सविकल्पक इति चोच्यते सत्र पुनः दृश्यानुविद्धः शब्दानुविद्धश्चेति द्विविधः ॥ दृश्यमिश्रो दृश्यानुविद्धः शब्दमिश्रः शब्दानुविद्धः इति विवेकः ॥

भा०–अख्याति मत सांख्य और प्रभाकरोंका है, अन्यथाख्यातिका मत भाट्टवैशेपिकोंका है–और आत्मख्यातिका मत विज्ञानवादियोंका है. असत्ख्याति मत शून्यवादियोंका है. अनिर्वचनीयख्याति मत (अर्थात् रज्जुमें सर्पभान शुक्तिमे रजत इत्यादिक स्थलमे वेदान्तवालोंका अनिर्वचनीय ख्याति कहिये सत् असत्से विलक्षण प्रकारसे भासमान होता हुआ सर्प है ऐसी अनिर्वचनीय ख्याति मत है. ऐसेही रज्जुमें सर्प इसही दृष्टांतपर ये पांच ख्याति.मत है) इति ॥ ५ ॥ एक रस वस्तु

१–रज्जौ सर्प इत्यादि दृष्टांतेष्वासां ख्यातीनां प्रयोजनम्, तत्र क्रमः अख्यातिमत सांख्यप्रभाकरयोरित्यादि ।

मात्रत्व करके चित्तकी तदाकार वृत्तिका विशेषकालतक अवस्थान (स्थिति) रहना यह संप्रज्ञातसमाधि कही है सो यह सविकल्पक कहलाती है; फिर यह सविकल्प समाधि दृश्यानुविद्ध, १ शब्दानुविद्ध २ ऐसे दो प्रकार की है–दृश्यसे मिली हुई दृश्यानुविद्ध कहलाती है और शब्दसे मिलीहुई शब्दानुविद्ध है ऐसा विवेक है।

वृत्तिमपि अखंडैकरसमात्रत्वेनोपसंहृत्य वृत्तिमतश्चित्तस्य प्रलयपूर्वकं वस्तुमात्रत्वेनाऽवस्थानमसंप्रज्ञातसमाधिः॥ स एव निर्विकल्पक इति च गीयते। दृश्यानुविद्धशब्दानुविद्धनिर्विकल्पकसमाधय एव बाह्याऽभ्यंतरभेदेन षट्समाधय इति व्यवह्रियंते १ सत्वरजस्तमोगुणात्मिकाःशांतिघोरमूढवृत्तयः। तत्र शांतिः सुखमौदार्य्यं वैराग्यं च। घोरस्तु कामलोभक्रोधस्तृष्णा।मूढो मोहो भ्रांतिः एतासां वृत्तीनां हृदये यत्स्फुरणं दृश्यं तस्य द्रष्टा साक्षी अनुस्यूतोहमिति दृश्यानुविद्ध आंतरीयसविकल्पकसमाधिः १

भा०–वृत्तिकोभी अखंड एकरस मात्रत्व करके उपसंहार कर वृत्तिवाले चित्तकी प्रलयपूर्वक वस्तु मात्रत्व (ब्रह्मरूपत्व) करके (अवस्थान) स्थित रहनेको असंप्रज्ञातसमाधि कहते है; वही निर्विकल्प समाधि कही है–दृश्यानुविद्ध, शब्दानुविद्ध, निर्विकल्पक येही (तीन) समाधि बाह्य अभ्यंतर भेद करके छह समाधि गिनी जाती है ऐसा व्यवहार है ॥ १ ॥ सत्व, रज, तमोगुण स्वभाववाली शांति, घोर, मूढ ये वृत्ति है–तहां शांतिनाम सुख, उदारपना, और वैराग्य है–घोर नाम काम, क्रोध, लोभ तृष्णा–मूढ नाम मोह भ्रांति। सो इन वृत्तियों-

१ ध्यानमय दृश्यानुविद्धः।

की दृश्य (वस्तु) जो कछु हृदयमें फुरना होवे तिसका, द्रष्टा साक्षी मे ही (ब्रह्मरूप करके) अनुस्यूत (मिलाहुआ) हूं ऐसी दृश्यानुविद्ध आंतरीयसविकल्पक समाधि हे अर्थात् अंतर कहिये हृदयमें यह विकल्प रहता है इस लिये यह नाम है ॥

वृत्तीनां त्रिगुणात्मकत्वादसंगोहमिति ॥ १ ॥शब्दानुविद्ध आंतरीयसविकल्पकसमाधिः ॥ २ ॥ हृदये एतयोर्विकल्पयोरस्फुरणमसंप्रज्ञातसमाधिः स एव निर्विकल्पक इति चोच्यते ॥ ३ ॥ अथवा ह्यसूयादिकस्य द्रष्टा साक्षी अनुस्यूतोहमिति दृश्यानुविद्धः सविकल्पकसमाधिः ॥४॥ सूर्य्यादिकादसंगोहमिति शब्दानुविद्धः ॥ ५ ॥ एतदुभयविकल्पास्फुरणान्निर्विकल्पकसमाधिः ॥ ६ ॥ कामक्रोधलोभमोहमदमात्सर्याणि अरिषड्वर्गः ॥ २ ॥ अस्ति जायते वर्द्धते विपरिणमते अपक्षीयते नश्यतीति षड्भावविकाराः ॥ ३ ॥ त्वङ्मांसरुधिरमेदोमज्जास्थीनि षट्कौशिकाः ॥ ४ ॥

भा०–वृत्तियोंको त्रिगुणात्मक हानेसे मैं असंग (प्रत्यगात्मा) हूं[१] ऐसे शब्दानुविद्ध आंतरीय सविकल्पक समाधि है २ हृदयमे इन दोनुवों ही विकल्पोंकी स्फुरना नही होनी यह असंप्रज्ञात समाधिहे यही निर्विकल्पक कहलाती है ३ इस्से अनंतर बाहिर सूर्यादिकोंका द्रष्टा (देखनेवाला) साक्षी मे ही (ब्रह्मरूपकरके) अनुस्यूत (अनुगत आतहू) ऐसी दृश्यानुविद्ध सविकल्पक समाधिहे ४ और सूर्यादिकोंसे मे असंगहूं यह कहना, सो शब्दानुविद्ध समाधिहे ५ और इनदोनोंही विकल्पोंकी स्फुर-

१–प्रत्यगात्माहमस्मीति शब्दानुविद्धः ।

ना नहीं होनेसे निर्विकल्पक समाधि होतीहै ६ काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य, (अन्यके कल्याणमें दुःखपाना) ये छह अरिषड्वर्गसं-ज्ञकहै २। अस्ति १ (है) जायते २ (जन्मना) वर्द्धते ३ (बढना) विप-रिणमते ४ (विकारको प्राप्तहोना) अपक्षीयते ५ (क्षीणहोना) नश्यति ६ (नष्टहोना) ये छःभावविकार कहेहैं ॥ ३ ॥ त्वचा १ मांस २ रुधिर ३ मेद ४ मज्जा ५ अस्थि ६ ये छह कोशहैं ॥ ४ ॥

जरामरणक्षुत्पिपासाशोकमोहाः षडूर्मयः॥५॥उप-क्रमोपसंहारावभ्यासोऽपूर्वताफलम् ॥ अर्थवादोपप-त्तिश्चलिंगंतात्पर्यनिर्णये॥ इति षड्विधलिंगम्॥६॥ अद्वितीयात्मप्रतिपादकत्वात् सृष्टेः पूर्वं नामरूपर-हितं सत्तामात्रमिदं जगदितिच्छांदोग्ये षष्ठप्रपाठकप्र-करणे 'सदेवसोम्येदमग्र आसीत्' इति श्रुत्याप्रतिपा-दनमुपक्रमः 'प्रतिपाद्यमानं सर्वमिदं जगत्पूर्वोक्तं स-त्त्वयमेव नान्यदिति एतदात्म्यमिदᳬंसर्वमिति' श्रु-त्यंते प्रतिपादनमुपसंहारः ॥ १ ॥ प्रकरणे प्रतिपा-द्यस्य मध्ये तत्त्वमसीति नवसंख्याकोपदेशेन प्र-तिपादनमभ्यासः ॥२॥ प्रमाणानां मध्ये लक्षणया तंत्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामीत्युपनिषत्प्रमाणेन गम्य आत्मा नेतरेणेति विवेकः अपूर्वता ॥ ३ ॥

भा०–जरा १ (वृद्धावस्था) मरण २ क्षुधा ३ पिपासा ४ (तृषा) शोक ५ मोह ६ ये छह ऊर्मि (लहरी) है ५। उपक्रम१ उपसंहार २ अभ्यास ३ अपूर्वता ४ फल ५ अर्थवाद ६ उपपत्ति ये लिंग तात्पर्य-के निर्णय करनेमें हैं; ऐसे छह प्रकारके लिंगहै ६। अब इनको स्पष्ट कहते हैं, अद्वितीय आत्माके प्रतिपादक होनेसे सृष्टिसे पहले नामरूपरहित

सत्तामात्र यह जगत् है ऐसे छांदोग्य षष्ठप्रपाठक प्रकरणमें कहाहै. हेसोम्य यह सत्तामात्रही पहले होताभया ऐसे श्रुतिसे प्रतिपादन कियाजरतां है सो उपक्रम है। (फिर) प्रतिपाद्यमान संपूर्ण यह जगत् पूर्वोक्त सत्स्वरूप आपही है अन्य नहीं यह सब कुछ आत्मस्वरूप है ऐसे श्रुतिके अन्तमें प्रतिपादन कियाहै सो उपसंहारहै ऐसे उपक्रमोपसंहार लिंगहै १ और प्रकरणमें कहने योग्यके मध्यमें तत् त्वमसि ऐसे नव उपदेशों करके प्रतिपादन करनेको अभ्यास कहतेहैं २. प्रमाणोंके मध्यमें लक्षणा करके तिस औपनिषद (उपनिषदमें कहेहुए) पुरुषको (आत्माको) पूछताहूं ऐसे उपनिषत् प्रमाण करके गम्य आत्माहै अन्यकरके नहीं—ऐसे विवेकको अपूर्वतालिंग कहतेहैं ॥ ३ ॥

प्रारब्धक्षयपर्यंतं देहेंद्रियादौ मिथ्याप्रतीतिः प्रारब्धस्य निश्शेषताप्राप्ते तदप्रतीतिपूर्वकमद्वितीयात्मस्वरूपेणाऽवस्थानवान् पुरुषो देवदत्तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्षेऽथ न संपत्स्य इत्यादिश्रुत्या प्रतिपादनं फलम्॥४॥प्रकरणप्रतिपाद्यस्योत्तमादेशः ।श्रुतं भवतामतं मतं विज्ञानं विज्ञातमित्यादिश्रुत्या प्रशंसनमर्थवादः ॥ ५ ॥ यथामृज्जन्यघटशरावादीनां मृदऽभिन्नत्वं स्वर्णजन्यकटकमुकुटादीनां स्वर्णाभिन्नत्वं तथा कारणजन्यजगतः कारणाभिन्नत्वमिति वाचारंभणविकारो नामधेयम् मृत्तिकेत्येवसत्यमित्यादिश्रुत्या प्रतिपादिता युक्तिरुपपत्तिः ॥ ६ ॥

भा०—प्रारब्धके क्षयपर्यंत देह इंद्रिय आदिकोंमें मिथ्या असत्य, प्रतीते है, प्रारब्धपूरी हो लेवे तब तिनकी अप्रतीतिपूर्वक अद्वितीय आत्म-

स्वरूपें करके स्थित रहनेवाला पुरुष है देवदत्तकी (इस शरीरयुक्त जीवात्माकी) इतनेंही (चिर) बहुत अवस्था है कि जबतक में मोक्षसंपत्तिकी प्राप्त नहीं होता हूं ऐसें श्रुति करके प्रतिपादनको फल कहते हैं ॥ ४ ॥ प्रकरणमें प्रतिपादन करनेंयोग्यका उत्तम आदेश करना कि सुनना तुम्हको माना २· जानलिया जानलिया ऐसे श्रुति करके प्रशंसा की जावे सो अर्थवाद लिंग कहाता है ॥ ५ ॥ जैसे मृत्तिकासे उत्पन्न हुए घट शिकोरे सराई आदि मृत्तिकासे भिन्न (जुदे) नहीं है और सुवर्णसे बनें हुए कडूले मुकुट आदि सुवर्णसे भिन्न नहीं है ऐसेही कारण जो ब्रह्म है तिससे उत्पन्न हुआ जगत् कारणसे अभिन्नत्व है अर्थात् कारणरूपही है किंतु वाणीके आरंभमात्रमें नाममात्रकाही विकार है और मृत्तिकाही जैसे सत्य है(ऐसे ब्रह्मही सत्य है) ऐसें श्रुति करके कही हुई युक्ति उपपत्ति लिंगहै ॥ ६ ॥

शिशुत्वबाल्ययौवनकौमारतारुण्यवार्द्धक्यानिषडवस्थाः ॥ ७ ॥ पूर्वमीमांसोत्तरमीमांसाशब्दतर्कसांख्ययोगाः षट्शास्त्राणि ॥ ८ ॥ आश्वलायनापस्तंबबोधायनकात्यायनसत्याषाढवैखानसाःषट् सूत्राणि. ॥ ९ ॥ शिक्षा कल्पव्याकरण, निरुक्तिज्योतिश्छंदांसि षडंगानि ॥ १० ॥ स्नानसंध्याजपहोमदेवतार्चनातिथ्यवैश्वदेवाः षट् कर्म्माणि ॥ ११ ॥ पूर्वोक्तप्रमाणचतुष्टयमनुपलब्धिरन्यथानुपपत्तिरिति षट्प्रमाणानि ॥ १२ ॥ शमो, दम उपरतिस्तितिक्षा, समाधानं, श्रद्धेति शमादिषट्कम् ॥ १३ ॥

---

१ अर्थापत्तिरित्यपिपाठः ।

भा०-शिशुत्व१(अत्यंत बालक) बाल्य २ यौवन ३ कुमारअवस्था तरुण अवस्था ५ वृद्ध ६ येछह अवस्था है ॥७॥ पूर्वमीमांसा १ उत्तरमीमांसा २ शब्द अर्थात् पातंजल ३ (तर्क) न्याय ४ सांख्य ५ योग ६ छह शास्त्रहै(इनकी षट् शास्त्रसंज्ञा)है ८आश्वलायन१आपस्तंब २बौधायन कात्यायन ४ सत्यापाढी५वैखानस६ ये छह सूत्र है ॥९॥शिक्षा १ कल्प व्याकरण ३ निरुक्त ४ ज्योतिष ५ छंद ६ ये छह अंगहै ॥ १० ॥ स्नान १ संध्या २ जप ३ होम४देवताका पूजन, आतिथ्य(अतिथि अभ्यागतका पूजन)५ बलिवैश्वदेवकर्म ६ ये छह कर्म है ॥ ११ ॥ पहले कहे हुए प्रत्यक्ष आदि चार प्रमाण और अनुपलब्धि प्रमाण अन्यथानुपपत्ति प्रमाण ऐसे ये छह प्रमाण है ॥१२॥ शम १ आभ्यंतर(इंद्रिय) मनआदि वशमें करना, दम २ (बाह्य इंद्रिय रोकना) उपरति३(उपराम)तितिक्षा ४ (सहना) समाधान ५ (समाधिकी तरह चित्त वशमें रखना) श्रद्धा ६ ये छह शमादिक है ॥ १३ ॥

अज्ञानमावरणं विक्षेपः, परोक्षमपरोक्षम्, अनर्थनिवृत्तिरानंदावाप्तिश्चेतिसप्ताऽवस्थाः ॥ १ ॥ आवरणं द्विविधं न भाति कूटस्थ इत्यभानावरणमतोऽभानात् नास्तिकूटस्थ इत्यसदावरणमिति॥ परोक्षज्ञानादसदावरणनिवृत्तिः॥ अपरोक्षज्ञानादऽभानावरण निवृत्तिः ॥ ततो विक्षेपनिवृत्तिः अतोऽनर्थनिवृत्तिरानंदप्राप्तिश्च भवतीति विभावनीयम् ॥श्लो०॥शुद्धमीश्वरचैतन्यं जीवचैतन्यमेव च ॥ प्रमाता च प्रमाणं च प्रमेयं च फलं तथा ॥ १ ॥ इति सप्तविधं प्रोक्तं भिद्यते व्यवहारतः॥इति सप्तविधं चैतन्यम्॥२॥ मायोपाधिविनिर्मुक्तं शुद्धमित्यभिधीयते । मायासंबंधतश्चेशो जीवोऽविद्यावशस्तथा ॥ १ ॥

भा०-अज्ञान १ आवरण, २ विक्षेप, ३ परोक्ष, ४ अपरोक्ष ५ अनर्थ निवृत्ति ६ आनंदप्राप्ति ७ ये सात अवस्था हैं ॥ १ ॥ तहां आवरण दो प्रकारका है। कूटस्थ (चैतन्य) भान नहीं होता है ऐसा यह अभान आवरण है १ इसलिये भान नहीं होनेंसे कूटस्थ (चैतन्य) है नहीं है ऐसा यह असत् आवरण है २ परोक्ष ज्ञानसे (ब्रह्म) है ऐसे ज्ञानसे असत् आवरणकी निवृत्ति होती है।अपरोक्षज्ञानसे ब्रह्मको मे जानता हूं इस ज्ञानसे अभान आवरणकी निवृत्ति होती है तिस्से अनंतर विक्षेपकी निवृत्ति होती है फिर इससे अनर्थकी निवृत्ति होती है और आनंदकी प्राप्ति होती है ऐसा विचार करना। श्लोक-शुद्ध १ (ब्रह्म) ईश्वर चैतन्य २ जीव चैतन्य ३ प्रमाता ४ प्रमाण ५ प्रमेय ६ फल ७ ऐसे सात प्रकारसे कहा है यह भेद व्यवहारसे ही रहा है. इस प्रकार यह सात प्रकारका चैतन्य कहा है २ मायाकी उपाधिसे विनिर्मुक्त हुआ (चैतन्य) शुद्ध कहाता है और मायाके संबंधसे ईश (ईश्वर) कहलाता है अविद्याके वशसे जीव कहलाता है ॥ १ ॥

अंतःकरणसंबंधात्प्रमातेत्यभिधीयते ॥ तथातद्वृत्तिसंबंधात्प्रमाणमिति कथ्यते ॥ २ ॥ अज्ञातमपि चैतन्यं प्रमेयं कथ्यते तथा ॥ ज्ञातं चैव तु चैतन्यं फलमित्यभिधीयते ॥ ३ ॥ भूर्भुवः स्वर्महर्जनस्तपः सत्यमिति भूरादिसप्तकम् ॥ ३ ॥ अतल-वितल-सुतल-तलातल-रसातल-महातल-पाताला-न्यतलादिसप्तकम् ॥ ४ ॥ ज्ञानभूमिः शुभेच्छाख्या प्रथमा समुदाहृता॥ विचारणा द्वितीया स्यात्तृतीया तनुमानसा ॥१॥ सत्वापत्तिश्चतुर्थी स्यात्ततोः संसक्तिनामिका ॥ पदार्थाभावनी षष्ठी सप्तमी तुर्य्यगा स्मृतेति ॥ २ ॥ सप्तभूमिकाः ॥ ५ ॥

अन्तःकरणके सम्बन्ध होनेसे प्रमाता कहाजाताहै तथा अंतःकरणकी वृत्तिके सम्बन्ध होनेसे प्रमाण कहाजाता है ॥२॥ अज्ञात (विनाजाने) चैतन्यको प्रमेय कहतेहैं; ज्ञात (जाना हुआ) चैतन्यफल कहलाता है ३ भूलोक १ भुव० २ स्वर्लोक ३ मह० ४ जन ५ तप० ६ सत्यलोक ७ ऐसे भूलोकआदि सातहैं ॥ ३ ॥ अतल १ तल २ सुतल ३ तलातल ४ महातल५ रसातल६ पाताल ७ ये अतल आदि सातलोक हैं ॥४॥ ज्ञानभूमि शुभेच्छा नामक. पहली कहीहै, दूसरी विचारणा नामक भूमि है, तीसरी तनुमानसा नामक भूमिहै ॥१॥ चौथी सत्वापत्ति भूमिकाहै, पांचवीं संसक्तिका नामवाली है, छठी पदार्थाभावनी नामक भूमिहै, सातवीं तुर्यगानामक भूमिहै ॥२॥ ऐसे सातभूमिका कहीहै ५ ॥

भूमिका नाम चित्तस्य अवस्थाविशेषः ॥ अत्र भूमिकात्रयं ब्रह्मविद्यासाधनमेव । नतु ब्रह्मविद्याकोटावंतर्भावः ॥ भेदसत्यत्वबुद्धेरनिवृत्तत्वात् ॥ यश्चतुर्थभूमिकांप्राप्तः सब्रह्मविदित्युच्यते। पंचमभूमौ निर्विकल्पात्तदा स्वयमेव व्युत्तिष्ठति सोयं योगी ब्रह्मविद्वरः ॥ षष्ठभूमौ पार्श्वस्थबोधितोऽव्युत्तिष्ठते सोयं ब्रह्मविद्वरीयान् ॥ तदेतद्भूमिद्वयं सुषुप्तिरिति चाभिधीयते। असंप्रज्ञातसमाधिप्रतिपादकानि योगशास्त्राणि सप्तमभूमिकां प्राप्ते योगिन्येव पर्य्यवस्यंति सोयमीदृशो योगी व्युत्थानरहितः निर्विकल्पकसमाधिस्थः । परमहंसः सप्तमभूमौ ब्रह्मविद्वरिष्ठः इति चोच्यते ॥

भा०-भूमिका नाम.चित्तकी अवस्थाविशेष है यहां तीसरी भूमिका ब्रह्मविद्याका साधनही है, ब्रह्मविद्याकोटिमें अंतर्भाव नहीं है क्योंकि

वहां भद्रबुद्धिका सत्यभावना रहता है और जो चौथी भूमिकामें प्राप्त है वह ब्रह्मवित् कहलाता है और पांचवी भूमिमें निर्विकल्पक होनेसे तब आपही उठता है सो यह योगी ब्रह्मविद्वर कहलाता है। छठी भूमिमें बराबरमें स्थित हुआभी बोधकरानेसे नहीं उठता है सो यह ब्रह्मविद्वरीयान् योगी कहाहै सो यह दोनों भूमिका सुपुप्ति ऐसीभी कहलाती हैं. असंप्रज्ञात समाधिके प्रतिपादक योगशास्त्र सातवी भूमिविषे पहुंचे हुए योगीजनमें समाप्त होते हैं सो यह ऐसा योगी व्युत्थान (उठना कंपना आदि) रहित हुआ निर्विकल्पक समाधिमें स्थित हुवा (यह) परमहंससातवीं भूमिमें ब्रह्मविद्वरिष्ठ कहलाता है॥

श्लोकः–ज्ञानेंद्रियाणि खलु पंच तथापराणि कर्मेंद्रियाणि मनआदिचतुष्टयं च ॥ प्राणादिपंचकमथो वियदादिकञ्च कामश्च कर्म च तमः पुनरष्टधा पूः [१] इति पुर्यष्टकम्॥१॥ भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च॥ अहंकारइतीयंमे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा॥१॥ इति प्रकृत्यष्टकम्॥२॥ यमनियमाऽऽसनप्राणायामप्रत्याहार धारणाध्यानसमाधयः ॥ अष्टांगानि॥३॥ निर्विकल्पसमाधेरिति केचित् ।

भा०श्लोक–पांच ज्ञान इंद्रिय १ पांचकर्म इंद्रिय २ मन आदि चतुष्टय ३ (मन बुद्धि चित्त अहंकार) पांच प्राण ४ आकाश आदि पांचतत्त्व ५ काम अर्थात् इच्छा ६ (कायिक वाचिक मानसिक) कर्म ७ तम अर्थात् मूल अज्ञान ८ ये आठ पुरी कहलाती हैं॥१॥ इति पुर्यष्टकम्॥१॥ भूमि १

---

१ कामोभिलाषः कर्म कायिकंवाचिकं मानसिकमिति त्रिविधम्। तमइशब्देन मूलाज्ञानं गृह्यते इति। २ भूम्यादिशब्देन पंच गंधादितन्मात्राण्युच्यन्ते मन इति मनसः कारणमहंकारो गृह्यते। बुद्धिरित्यहंकारकारणं महत्तत्त्वमहंकार इत्यव्यक्तं गृह्यते इति॥

जल २ अग्नि ३ वायु ४ आकाश ५ अर्थात् गंध आदिक इनकी ५ तन्मात्रा मन अर्थात् मनका कारण अहंकार ६ बुद्धि अर्थात् अहंकारका कारण ७ अहंकार, कहिये महत्त्व, अव्यक्तमाया ८ ऐसे यह मेरी प्रकृति आठ प्रकारकी हैं १ इति प्रकृत्यष्टकम् ॥२॥ यम १ नियम २ आसन ३ प्राणायाम ४ प्रत्याहार ५ धारणा ६ ध्यान ७ समाधि ८ ये आठ अंग निर्विकल्पक समाधिके हैं ऐसे केचित् मत है; सब आचार्योंका मत नहीं है (किंतु) अन्य सविकल्पकसमाधिके अंग मानते है ॥ ३ ॥

अस्मिन्पक्षे अष्टांगघटकसमाधिशब्देन सविकल्पकाख्यसंप्रज्ञातसमाधिरुच्यते ॥ संप्रज्ञातसमाधेरेतान्यष्टांगानीति केचित् । अस्मिन्पक्षे अंगघटकसमाधिः संप्रज्ञाताद्भिन्न इत्यंगीकरणीयम् । अंगांऽगिनोर्भेदस्यावश्यकत्वात् ॥ तथाच विच्छिद्य २प्रत्ययावृत्तिः ध्यानं सावधानेनाऽविच्छिद्याविच्छिद्यप्रत्ययावृत्तिरंगघटितसंप्रज्ञाताख्यसाधनसमाधिः ॥ निर्वाणेनाऽविच्छिद्याऽविच्छिद्य प्रत्ययावृत्तिः अंगिस्वरूपसंप्रज्ञाताख्यसाध्यसमाधिरिति भेदः त्रयाणां विपर्ययेपि चित्तपरिपाकतारतम्येनांगीकरणीयः ॥

भा०–सो इस पक्षमें अष्टांगघटित समाधि शब्द करके सविकल्प नामक संप्रज्ञात समाधि कही जाती है; संप्रज्ञात समाधिके आठ अंग हैं यहभी (केचित्) किसीका मत है (इस लिये यहां) इस पक्षमें अंगघटक समाधि, संप्रज्ञात समाधिसे भिन्न है ऐसा अंगीकार करना, क्यों अंग और अंगी कहिये अंगवालेका भेद अवश्यही रहता है. तथाच सो कहते हैं कि विच्छेद विच्छेद होके निश्चयरूप वृत्ति होना ध्यान है और सावधानता करके विच्छेद नहीं होके २ निश्चयरूप वृत्ति होना यह अंगघटित (अष्टांगवाली) संप्रज्ञात नामक साधनसमाधि है और नि-

मुक्तता, करके विच्छेद नहीं होके अंगके स्वरूपवाली संप्रज्ञात नाम साध्यसमाधि है ऐसा भेदहै इन तीनुवोंका एकही विषय है परंतु चित्तके परिपाक (निरोध) की तारतम्य अर्थात् ज्यादे विशेषता करके यह भेद अंगीकार करना योग्य है ॥

करचरणादिसंस्थानविशेषलक्षणानि पद्मकस्वस्तिकादीनि आसनानि इंद्रियाणां स्वस्वविषयेभ्यः प्रत्याऽऽहरणं प्रत्याहारः ॥ अद्वितीयवस्तुनि अंतरिंद्रियधारणा॥धारणा॥श्लो०दर्शनंस्पर्शनं केलिः कीर्तनं गुह्यभाषणं ॥संकल्पोऽध्यवसायश्चक्रियानिर्वृत्तिरेवच ॥१॥एतन्मैथुनमष्टांगंप्रवदंतिमनीषिणः ॥ विपरीतं ब्रह्मचर्य्यमनुष्ठेयं मुमुक्षुभिरितिअष्टांगम्॥४॥ रागपूर्वंकरुयादिविषयकज्ञानंदर्शनम् १तत्पूर्वकं क्रियादिविशेषजन्यं ज्ञानंस्पर्शनम् २ रागपूर्वकंपरिहासादिव्यवहारः केलिः ॥ ३ ॥

भा०—हाथ पैर आदिकोंकी (संस्थान) स्थिति करनेके विशेष लक्षणोंवाले पद्मक, स्वस्तिक आसन हैं और इंद्रियोंको अपने २ विषयोंसे हटाना यह प्रत्याहार है. अद्वितीय वस्तुमें (ब्रह्मविषे) मन बुद्धि आदिकी धारणा करनी यह धारणा है—श्लोक- दर्शन१ स्पर्शन२ केलि ३ कीर्तन४ गुह्यभाषण ५ संकल्प ६ अध्यवसाय ७ क्रियाकी निर्वृत्ति ८ ॥ १ ॥ यह मैथुनका अष्टांगहै ऐसे पंडितजन कहते हैं और इससे विपरीत अर्थात् इनको नहीं करना ऐसा ब्रह्मचर्य है सो मुमुक्षुजनोंनें करना २ इति अष्टांगम् ४ (राग) प्रीतिपूर्वक स्त्रीआदिविषयकज्ञानको दर्शन कहते हैं १ तिस प्रीतिपूर्वक जिसमें विशेष क्रिया होके उत्पन्न होता हो सो स्पर्श कहाहै २ और रागपूर्वक हास्य आदि व्यवहार करना यह केलि कहाहै ॥ ३ ॥

स्त्र्यादेरनुरागपूर्वकं सौंदर्य्यादिवर्णनं कीर्तनं ४ राग-पूर्वकं रहसि संभाषणं गुह्यभाषणं५ स्त्र्यादेर्विषयको दृष्टे-च्छाविशेषः इदमस्तीति संकल्पः ६ अनयारमे इति निश्चयः अध्यवसायः ७ रागपूर्वकं स्त्र्यादिविषय-कानुभवविशेषः क्रियानिर्वृत्तिः ८ ज्ञाताज्ञानंज्ञेयम् भोक्ताभोग्यंभोगः कर्त्ता, करणं, क्रियेत्येकः पक्षः नवविधसंसारः ॥ १ ॥ पक्षांतरंचवर्तते तथाहि इति-

भा०—स्त्री आदिकोंके अनुराग (प्रीति) पूर्वक सौंदर्य (सुंदरता) आदिका वर्णन कीर्त्तन है ४ रागपूर्वक एकांतमें संभाषण (वार्तालाप) करना गुह्यभाषण है ॥ ५ ॥ स्त्री आदि विषयक देखनेकी इच्छाविशेष (कोई) यह है ऐसा दृढ (करना) संकल्प कहा है ॥ ६ ॥ इस(स्त्रीके संग) रमण करूं ऐसा निश्चय करना अध्यवसाय है ॥ ७ ॥ रागपूर्वक स्त्री आदि विषयक अनुभवविशेष (आसक्त होना) क्रियानिर्वृत्ति है ॥ ८ ॥ ज्ञाता १ ज्ञान २ ज्ञेय ३ (जाननें योग्य) भोक्ता ४ भोग्य (पदार्थ) ५ भोग ६ कर्त्ता ७ करण ८ क्रिया ९ ऐसे यह एक पक्ष (में) नव प्रकारका संसार है १ दूसरा पक्षभी वर्त्तमान है सो दिखाते हैं ॥

पंचमहाभूतानि ज्ञानेंद्रियाणि कर्मेंद्रियाणि च प्राणादि पंचकं मनआदिचतुष्टयं स्थूलशरीरमेकं त्रिविधक-र्माणि अवस्थात्रयम् । एतेषांकारणीभूतमज्ञानं चेति नवविधसंसारः । श्लो० दिग्वातार्कप्रचेतोऽश्विवह्नी-द्रोपेंद्रमृत्युकाः ॥ ब्रह्मा चंद्रः सुराचार्यः क्षेत्रज्ञः शिव ईश्वरः १ इत्यधिष्ठानदेवतापंचदशकम् । अस्थिचर्म-

१ दिग्वातार्कादयएताः क्रमतः ज्ञानेंद्रियकर्मेन्द्रियान्तःकरणचतुष्टया-ज्ञानानां देवता इति ज्ञातव्यम् ।

स्नायुमज्जावसामांसशुक्रशोणितश्लेष्मदूपिकाविण्मूत्रकफवातपित्ताः इति अस्थ्यादि पंचदशकम् ॥ एतत्पंचदशसमुदायात्मकं स्थूलशरीरमिति ज्ञातव्यम् ॥ रागद्वेषकामक्रोधलोभमोहमदमात्सर्येर्ष्यासूयादम्भदयाहंकारेच्छाभक्तिश्रद्धा इति रागादिषोडशकम् ॥

भा०-पांच महाभूत १ ज्ञानेंद्रिय २ कर्मेंद्रिय ३ पांचप्राण ४ (मन, बुद्धि चित्त अहंकार) मन, आदि चतुष्टय ५ एक स्थूल शरीर ६ तीन प्रकारके कर्म ७ तीन अवस्था ८ इन सबोंका कारणभूत अज्ञान ऐसे नव प्रकारका संसार है । श्लोक-दिशा१वायु २ सूर्य ३ प्रचेता(वरुण) ४ अश्विनीकुमार ५ अग्नि ६ इंद्र ७उपेंद्र (विष्णु)८मृत्यु९ब्रह्मा१०चंद्रमा ११ बृहस्पति १२ क्षेत्रज्ञ १३ शिव १४ ईश्वर १५ ऐसे पंदरह अधिष्ठान-देवता है ॥ अस्थि १ चर्म २ स्नायु,३मज्जा, ४ वसा, ५ मांस ६ शुक्र ७ शोणित ८ श्लेष्मा ९ दूषिका(ढीढ,) १० विष्ठा ११ मूत्र १२ कफ १३ वात १४ पित्त १५ ये पंदरह अस्थि आदिक है इनही पंदरहका समुदायात्मक स्थूल शरीरहै ऐसे जानना चाहिये ॥ राग१द्वेष २ काम ३ क्रोध ४ लोभ ५ मोह ६ मद७मात्सर्य८ईर्ष्या ९ असूया(गुणोमें दोष निकालना,)१० दंभ (पाखंड,) ११ दया १२ अहंकार १३ इच्छा १४ भक्ति १५ श्रद्धा १६ ऐसे सोलह राग आदिक है ।

एतेषांमध्ये भक्तिश्रद्धे मुक्तिहेतू इच्छातुमुक्तेर्हेतुर्बंधहेतुश्चभवति अन्येबंधहेतवः इतिविवेकः ॥ कर्मेंद्रियपंचकं५ज्ञानेंद्रियपंचकं५प्राणादिपंचकं५ अंतःकरणंचेतिषोडशकं लिंगमित्येके।इदमेवसूक्ष्मशरीरमितिज्ञातव्यम्॥श्लो०पंचप्राणामनोबुद्धिर्दशेंद्रियसम-

न्वितम्॥अपंचीकृतभूतोत्थंसूक्ष्मांगंभोगसाधनमिति,
१ सप्तदशाऽवयवकंलिंगमित्येकः पक्षः॥ चित्ताहंका-
राभ्यां सहितं पूर्वोक्तं नवदशकं लिंगमिति पक्षां-
तरम् ॥

भा०-इन्होंके मध्यमें भक्ति और श्रद्धा मुक्तिकी हेतु हैं और इच्छा मुक्तिकी हेतुहै तथा बंधकीभी हेतु है, अन्य सब बंधके हेतुहैं ऐसा विवेक है ॥ पांच कर्म इंद्रिय ५ पांच ज्ञान इंद्रिय ५ पांच प्राण ५ अंतःकरण १ ऐसे सोलह वस्तुओंका लिंगहै यही सूक्ष्मशरीर है ऐसे जानना चाहिये ॥ श्लोक-पांच प्राण ५ मन १ बुद्धि १ दश इंद्रिय १० इन्होंसे समन्वित हुआ अपंचीकृत तत्वोंसे उत्पन्नहुआ सूक्ष्मशरीर भोगका साधन कहा है १ ऐसें यह सतरह वस्तुओंका लिंग है ऐसा एक पक्ष है; और चित्त, अहंकार इनदोनुओंसे युक्त हुआ यह पूर्वोक्त शरीर उन्नीस तत्वोंका लिंगहै ऐसाभी एक पक्ष है ॥

ज्ञानेंद्रियपंचकं, कर्मेंद्रियपंचकं प्राणादिपंचकं श-
ब्दादिपंचकं, मनआदिचतुष्टयमित्येवं चतुर्विंशति-
तत्वानीति केचित्॥ पंचीकृतभूतानि पंच५ शरीर-
त्रयम्३ अवस्थात्रयम्३ अज्ञानंच पूर्वोक्तैस्तत्त्वैः सह
षट्त्रिंशत्तत्त्वानिइतिकेचित् ॥ षड्भावविकाराः
षडूर्मयः षट्कोशिकाः अरिषड्वर्गाः जगत्त्रयम् गुण-
त्रयम् कर्मत्रयं वचनादिपंचकं संकल्पादिचतुष्ट-
यम् मैत्र्यादिचतुष्टयम् दिग्वाताकाद्यधिष्ठानदेवता
श्चतुर्दशकम् ॥ १४ ॥

भा०-पांच ज्ञान इंद्रिय ५ पांच कर्म इंद्रिय ५ पांच प्राण ५ शब्द आदिक

पांच ५ (विषय) मन आदि चार ४ ऐसे चौवीश प्रकारके तत्व हैं ऐसे कईक कहते हैं-पंचकृत तत्व पांच ५ सूक्ष्म आदि तीन शरीर ३ तीन अवस्था ३ अज्ञान १ ये पूर्वोक्त (चौवीश) तत्वोंके साथ मिलके छत्तीस प्रकारके तत्व हैं ऐसे कितेक कहते हैं ॥ छह भावविकार६पहले कह-दिये हैं, छह ऊर्मि, ६ छह कोश,६छह प्रकारका अरिवर्ग, ६ तीन जगत् (लोक,) ३ तीन गुण, ३ तीन कर्म, ३ वचन, आदान इत्यादिक पांच कर्म इंद्रियोंके विषय ५ संकल्प आदि चार ४ मैत्री आदि चार ४ दि-शा, वायु सूर्य इत्यादिक अधिष्ठानदेवता चौदह ॥ १४ ॥

अज्ञानाऽधिष्ठानव्यतिरिक्ताश्चतुर्दशकम् पूर्वोक्तैस्त त्वैःसह षण्णवतिरितिकेचित् ॥ विविदिषासंन्यासो विद्वत्संन्यासश्चेति परमहंससंन्यासद्वयम् ॥ जात-रूपधरः कमण्डलुधारीति विद्वत्संन्यासद्वयम् ॥ क्रमनिग्रहोरूढनिग्रहश्चेतिनिग्रहद्वयम् ॥ सामान्या-हंकारो विशेषाऽहंकारश्चेति अहंकारद्वयम् ॥ ब्रह्मानंदो विषयानंदो वासनानंदश्चेति आनंद-त्रयम् ॥

भा०-यहां अज्ञानके अधिष्ठानदेवता ईश्वर से अलग चौदह देव-तोंको लेना फिर ये सब पूर्वोक्त तत्वोंसमेत छियानवें ९६ तत्व होते हैं ऐसे भी कितेक आचार्योंका मत है, विविदिषासंन्यास१विद्वत्संन्यास २ ऐसे परमहंससंन्यास दो प्रकारका है । जातरूप धर १ (नग्न रहना) । और कमंडलुआदि धारण करना २ ऐसे दो प्रकारका विद्वत्संन्यास है ॥ क्रमसे निग्रह(रूढ,)एकवार निग्रह करना:ऐसे दो प्रकारका निग्रह है ॥ सामान्य अहंकार विशेष अहंकार ऐसे दो प्रकारका अहंकार है ॥ ब्रह्मका आनंद १ विषयका आनंद २ वासना आनंद ३ ऐसे तीन प्रका-रका आनंद होता है ॥

निजानंदमुख्यानंदात्मानंदयोगानंदाद्वैतानंदानांत्र- ह्मानंदेऽतर्भावः । विद्यानंदस्यविषयानंदेंतर्भावः आ- गामिसंचितप्रारब्धानिकर्मत्रयम् । प्रारब्धकर्मफलभो- क्ता सन् मरणपर्य्यंतं कृतंपुण्यपापरूपं कर्म आगा- मीत्युच्यते १ जन्महेतुभूतं स्थितंपूर्वजन्मकृतं कर्म संचितमित्युच्यते २ शरीरारंभककर्म प्रारब्धमि- तिभेदः ३ जाग्रज्जाग्रज्जाग्रत्स्वप्नः जाग्रत्सुषुप्तिरिति जाग्रत्रयम् १ स्वप्नजाग्रत् स्वप्नस्वप्नः स्वप्नसुषुप्तिरि- तिस्वप्नत्रयम् २

भा०—निजआनंद, मुख्यआनंद, आत्मानंद, योगानंद, अद्वैतानंद इन्होंका अंतर्भाव ब्रह्मानंदमेंही है और विद्यानंदका विषयानंदमें अंतर्भाव है । आगामि १ संचित २ प्रारब्ध ३ ऐसे तीन कर्म हे । प्रारब्धकर्मको भोगता हुआ मरणपर्यंत जो पुण्यरूप अथवा पापरूप कर्म करता है वह आगामि कर्म है १ जन्मका हेतुभूत जो पूर्वजन्ममें किया हुआ कर्म स्थित है वह संचित कर्म कहलाता है २ शरीरका आरंभक कर्म प्रारब्धकर्म है ऐसा भेद है ॥३॥ जाग्रतजाग्रत् १ जाग्रत् स्वप्न २ जाग्रत् सुषुप्ति ३ ऐसे तीन प्रकारकी जाग्रत्अवस्था है । स्वप्नजाग्रत १ स्वप्नस्वप्न २ स्वप्नसुषुप्ति ३ ऐसे तीन प्रकारकी स्वप्नअवस्था है ॥ २ ॥

सुषुप्तिजाग्रत् सुषुप्तिस्वप्नः सुषुप्तिसुषुप्तिरितिसुषुप्ति- त्रयम्३ तथाहि—प्रमाज्ञानं जाग्रज्जाग्रत् १शुक्तिरजता- दिभ्रमो जाग्रत्स्वप्नः२ श्रमादिनास्तब्धीभावो जाग्र- त्सुषुप्तिः३एवंस्वप्नेमंत्रादिप्राप्तिः स्वप्नजाग्रत्१स्वप्ने- पिस्वप्नोमयादृष्टःइतिबुद्धिःस्वप्नस्वप्नः२ जाग्रद्दशा-

यौंकथयितुं न शक्यते स्वप्नाऽवस्थायां यत्किंचिद-
नुभूयते तत्स्वप्नसुषुप्तिः२एवंसुषुप्त्यवस्थायामपिसा-
त्विकीयासुखाकारावृत्तिः सासुषुप्तिःजाग्रत् ॥ १ ॥
तदनंतरंसुखमहमस्वाप्समितिपरामर्शः ॥

भा०—सुषुप्ति जाग्रत् १ सुषुप्ति स्वप्न २ सुषुप्तिसुषुप्ति ३ ऐसे तीन प्रकारकी सुषुप्तिअवस्था हैं—तथाहि—सो इन सबोंको दिखाते हैं—(प्रमाज्ञान) यथार्थ बुद्धिसे वस्तुका ज्ञान रहना सो जाग्रत्में जाग्रत् है १ जैसे सीपमें चांदीका भ्रमहोता है ऐसे वस्तुका भ्रम होना तहां जाग्रतमें स्वप्न है २ श्रम आदि करके (स्तब्धीभाव) चित्तमें कछुभी विचार न रहना तब जाग्रत्में सुषुप्ति है ॥ ३ ॥ ऐसेही सुपनामेंभी मंत्र आदिकी प्राप्ति होना तब स्वप्न जाग्रत् है १ सुपनामेंभी मेंने सुपना देखा ऐसी बुद्धि स्वप्नमें स्वप्न है २ जाग्रत् दशामें कहनेको समर्थ नहीं है सुपनामें तो कछुक (अनुभव हुआ)दीखाया, यह स्वप्न अवस्यामें सुषुप्ति है ॥ ३ ॥ ऐसेही सुषुप्ति अवस्थामेंभी (सात्विकी) सत्वगुण प्रधानवाली जो सुखाकारवृत्ति है सो सुषुप्तिमें जाग्रत् है, तिसके अनंतर में सुखसे सोता भया ऐसा (परामर्श) ज्ञान होता है ॥

तत्रैवयाराजसीवृत्तिः सासुषुप्तिस्वप्नः ॥ २ ॥ तद-
नंतरंदुःखमहमस्वाप्समिति परामर्शोपपत्तिः तत्रैव
या तामसीवृत्तिः सासुषुप्तिसुषुप्तिः३तदनंतरं गाढंमूढो
ऽहमासमितिपरामर्शः॥ज्ञानात्मा महात्मा शांतात्मा
चेतिआत्मत्रयम्। कुटीचकोबहूदको हंसो परमहंस-
श्चेति संन्यासचतुष्टयम् । अथभूमिकावर्णनम्।तत्व-
विदोपिक्लेशक्षयायाऽस्त्येवमसंप्रज्ञातसमाध्यपेक्षात-
स्य असंप्रज्ञातसमाधेर्गोऽश्वादिष्विवचाग्निरोधःप्र-
थमाभूमिः ॥ १ ॥

भा०–तहां सुषुप्तिअवस्थामें जो (राजसी) रजोगुण प्रधानवाली वृत्ति है सो सुषुप्ति अवस्थामें स्वप्न है ॥ २ ॥ तहां, तिस सोनेके अनंतर दुःखपूर्वक मैं सोता भया ऐसे (परामर्श) ज्ञानकी उपपत्ति होती है–और तहां जो (तामसी) तमोगुण प्रधानवाली वृत्ति है सो सुषुप्तिमें सुषुप्ति है ॥३ ॥ तिसके अनंतर (गाढ़) बहुतघना (मूढ) अचेत में होता भया ऐसा परामर्श ज्ञान होता है इति॥ ज्ञानात्मा १ महात्मा २ शांतात्मा ३ ऐसे तीन प्रकारके आत्माहें ॥ कुटीचक १ (कुटीमेंही प्रकाशनेंवाला) बहूदक २ बहुतजगासेअन्नजलादिलानेवाला हंस ३ परमहंस ४ ऐसे चार प्रकारका संन्यास है ॥ अथ भूमिका वर्णनम् ॥ तत्ववेत्ता पुरुषकेभी क्लेश नष्ट होनेंके वास्ते हो ऐसे असंप्रज्ञात समाधिकी अपेक्षा होवे तिस तत्ववेत्ताके असंप्रज्ञात समाधिसे जैसे गौ अश्व आदिकोंकी वाणीका निरोध है ऐसे (मनके रहे संतेही) वाणीका (निरोध) बंध होना प्रथम भूमि है ॥ १ ॥

बालमूकादिष्विवनिर्मननत्वं द्वितीया २ तंद्र्यामिवाहंकाराहित्यं तृतीया ३ सुषुप्ताविवमहत्तत्वराहित्यं चतुर्थभूमिकेतिभूमिका चतुष्टयम्· ४ तदेतद्भूमिका चतुष्टयमभिप्रेत्यशनैःशनैरुपरमेदित्युक्तं भगवता । श्लोकः । अध्यात्मविद्याधिगमः साधुसंगम एव च ॥ वासनासंपरित्यागः प्राणस्पंदनिरोधनम् ॥ १ ॥ इतियुक्तिचतुष्टयम् ॥

भा०–बालक और गूंगा पुरुषकी तरह निर्मननत्व, कछुकहनेंका मनन नहीं होना यह दूसरी भूमिका है २ और मूर्च्छामें जैसे अहंकार भी नहीं रहता है ऐसे अहंकार नहीं रहना यह तीसरी भूमिहै ३ सुषुप्ति-अवस्थाकी तरह महत्तत्वको भी अभाव होजाना यह चौथी भूमिका है ति भूमिकाचतुष्टयम् ॥ ४ ॥ सो इन चारों भूमिकाओंमें प्राप्त होके

शनैः शनैः उपरमको प्राप्त होजावे ऐसे भगवान्नें भी कहाहै—श्लो०अध्यात्म-
विद्याकी प्राप्ति १ साधुजनका संग २ वासनाओंका सम्यक प्रकारसे
त्याग ३ (फिर) प्राणवायुको रोकना ४ इति.युक्तिचतुष्टय अर्थात्
ये चार युक्ति हैं ॥

चित्तक्षये एकैवयुक्तिःसाधनमित्यतः पूर्वस्मिन् दा-
र्ढ्याभावे उत्तरस्मिन्साधने प्रवृत्तिरितिचज्ञेयम् ॥
श्लोकाः । अजिह्वःपंढकःपंगुरंधोवधिरएवच ॥ मु-
ग्धश्चमुच्यतेभिक्षुः पड्भिरेतैर्नसंशयः ॥ १ ॥ इत्यऽ
जिह्वादिपट्कम् ॥ इदमिष्टमिदंनेति योऽश्नन्नपि न स-
ज्जते ॥ हितं सत्यं मितं वक्ति तमजिह्वं प्रचक्षते॥२॥
अद्यजातांयथानारीं तथापोडशवार्षिकीम् ॥ शत·
वर्षांचयोदृष्ट्वा निर्विकारःसपंढकः ॥ ३ ॥

भा०–चित्तक्षय करनेमें एकही युक्ति साधनरूप है तहां पूर्व साधनमें
प्रवृत्ति नहीं होवे तो उत्तर साधनमें प्रवृत्ति करना ऐसे जानना । श्लोक–
जिह्वारहित १ नपुंसक २ पांगला ३ अंधा ४ बहिरा ५ मुग्ध (भोला) ६
इन छह गुणों करके भिक्षु (संन्यासी) जन मुक्तिको प्राप्त होता है इसमें
संदेह नहीं १ इति अजिह्वादिपट्कम् ॥ अब स्पष्ट कहते हैं यह–मीठा है
यह नहीं है ऐसे भोजन करता हुआ भी जो नहीं आसक्त होता है और
हित, सत्य (मित) स्वल्प प्रमित जो बोलता है उसको अजिह्व अर्थात्
जिह्वारहित कहते हैं २ जैसे अब जन्मी हुई नारीको (कन्याको) जाने
वैसेही सोलह वर्षकी तथाही सौ वर्षकी स्त्रीको देखके जो विकारको प्रा-
प्त न हो (मन चलायमान नहो) सो नपुंसक है ॥ ३ ॥

भिक्षार्थमटनं यस्य विण्मूत्रकरणाय च ॥ योजना-
न्न परं याति सर्वथा पंगुरेव सः ॥३ ॥ तिष्ठतो व्रजतो

वापि यस्यचक्षुर्नदूरगम्॥चतुर्दिक्षुभुवंगत्वा परिव्राड्
सोंऽधउच्यते ॥ ४॥ हिताहितं मनोरामं वचःशोका-
वहं च यत् ॥ श्रुत्वापिनशृणोतीह बधिरः स प्रकीर्ति-
तः ॥५॥ सान्निध्येविषयाणांच समर्थोऽविकलेंद्रियः।
सुप्तवद्वर्तते नित्यं स भिक्षुर्मुग्ध उच्यते ॥ ६ ॥

भा०–जो भिक्षाके वास्ते गमन करै अथवा मलमूत्र त्यागके वास्ते कहीं जावे और (योजन) ४ कोशसे परे कभी न जावे वह संन्यासी सर्वथा पांगला है ३ ठहरते हुएके अथवा गमन करते हुएके जिसके नेत्र (दृष्टि) दूर नहीं जाते हैं चारों दिशामें पृथ्वीको प्राप्त होके (विचरके भी) वह संन्यासी अंधा है ४ हित अहित, मनको प्रिय, शोक करनें वाला, इत्यादिक सब प्रकारके वचनोंको सुनके भी जो नहीं सुनता है वह संन्यासी इस जगत्में बहिरा है ५ विषय समीप हुये पीछे समर्थ और परिपूर्ण इंद्रियोंवाला भी जो सोताहुआकी तरह वर्त्तता है वह संन्यासी मुग्ध अर्थात् भोला कहलाता है ॥ ६ ॥

मौनं योगासनं योगस्तितिक्षैकांतशीलताम्॥निस्पृ-
हत्वं समत्वं च सप्तैतान्येकदंडिनः ॥७॥ इति मौना-
दिसप्तकम् ॥ इडा च पिंगला चैव सुषुम्ना च ततःप-
रम् ॥ गांधारीहस्तिजिह्वाच पूषाचैवपयस्विनी ८॥
लकुहाऽलंबुसाचैव शंखिनीदशनाडिकेति ॥ ना-
डिकादशकम् ॥ इडाचंद्रनाडी १ पिंगलासूर्यना-
डी २ सुषुम्ना मध्यनाडी ३ गांधारीदक्षिणनेत्रिका ४
हस्तिजिह्वावामनेत्रिका ५ पूषादक्षिणकर्णिका ६

भा०–मौन १ योगका आसन २ योगाभ्यास ३ तितिक्षा (सहना) ४ निरंतर शीलता ५ इच्छा रहित ६ समता ७ ये सात एकदंडी संन्यासीके

धर्म है ७ इति मौनादिसप्तकम् ॥ इडा, पिंगला,सुपुम्णा, गांधारी, हस्ति, जिह्वा पूषा, पयस्विनी ॥ ८ ॥ लकुहा, अलंबुसा, शंखिनी, ये दश नाडी हैं—इति नाडी दशकम् ॥ इडा चंद्रमाकी नाडी है १ पिंगला सूर्यकी नाडी है २ सुपुम्णा मध्यकी नाडी है ३ गांधारी दहिनें नेत्रमें है ४ हस्तिजिह्वा बायें नेत्रमें है ५ पूषा दहिनें कानमें है ॥ ६ ॥

पयस्विनी वामकर्णिका७ लकुहागुदानाडी ८ अलंबुसामेढ्रनाडी ९ शंखिनीनाभिनाडीति विवेकः १० हरिब्रह्मरुद्रेंद्रवरुणेशपद्मोद्भवपृथिवीसूर्यचन्द्राः क्रमान्नाडीनां दश देवताः ॥ धनिनः स्थायिनः कृतिनः चक्रवर्तिनः क्रोधिनो मायिनः अतिचारिणो वाहनवतः अन्तर्मदोस्ति इत्यष्टांतरंगमदाः ॥ कुलं चैव धनं चैव रूपं यौवनमेव च । तथा राज्यं तपश्चैव इत्येते मद्बहिर्मदाः ॥

भा०-पयस्विनी बायें कानकी नाडी है ७ लकुहा गुदाकी नाडी है ८ अलंबुसा लिंगकी नाडीहै ९ शंखिनी नाभिकी नाडी है ऐसा विवेक है ॥ १० ॥ हरि, ब्रह्मा, रुद्र, इंद्र, वरुण, शिव, ब्रह्मा, पृथिवी, सूर्य, चंद्रमा, ये क्रमसे इडा आदि नाडियोंके दश देवता हैं ॥ धनवालेके १ किसी एक जगह स्थित रहनें वालेके २ विद्यावाले पंडितके ३ चक्रवर्ती राजाके ४ क्रोधवालेके ५ मायावालेके ६ अत्यंत विचरनेंवालेके ७ (हस्ती आदि) वाहनवालेके ८ भीतर मद (अभिमान) रहता है ऐसे ये आठ अंतरंग मद कहलाते हैं ॥ कुल १ धन २ रूप ३ यौवन ४ राज्य ५ तप६ऐसे ये छह बहिर्मद अर्थात् बाहिरके मद हैं ॥

पृथिवीसलिलं पावकः शशी पवनोंबरंरविः आत्मेत्यष्टमूर्तिमदाः ॥ पृथ्वीमदाविर्भावे तद्गुणभरितः वस्त्रादीच्छावान् भवति जीवः १ सलिलमदाविर्भावे

संसारभरितः ममेदमावश्यकमितिचिंतायुक्तो भव तिजीवः ॥ २ ॥ पावकमदाविर्भावे कामरसभरितः वनितासंभोगेच्छायां तदनुकूलव्यापारवान् जीवो भवति ॥ ३ ॥

भा०—पृथ्वी १ जल २ अग्नि ३ चंद्रमा ४ वायु ५ आकाश ६ सूर्य७आत्मा अर्थात् क्षेत्रज्ञ अथवा बुद्धि८ये आठ मूर्त्तिके(शरीरके,)मद हैं। पृथ्वीका मद प्रगट होताहै तब तिस पृथ्वीके गुणोंसे भराहुआ जीव वस्त्र आदिकोंकी इच्छावाला होता है १ चंद्रमाका मद प्रकट होनेमें संसारसे भरा हुआ जीव मैंने यह (काम) अवश्यही करना चाहिये ऐसी चिंतासे युक्त होताहै २ अग्निका मद प्रकट होताहै तब कामदेवके रससे भराहुआ यह जीव स्त्रीके संभोगकी इच्छामें तत्परहो तिसके ही अनुकूल व्यापार वाला होताहै ॥ ३ ॥

शशिमदाऽऽविर्भावे चिंताभरितः करिष्यमाणकार्यं भविष्यति वा कृतं चेदन्यथाभविष्यति वेतिसंशयात्तूष्णींस्थितो भवति जीवः ॥ ४ ॥ पवनमदाविर्भावे प्रयाणभरितः परदेशेच्छावान् भवति ॥ ५ ॥ आकाशमदाविर्भावे वाहनभरितः गजाश्वादीइच्छावान् भवति ६ सूर्य्यमदाविर्भावेक्रोधाग्निभरितः इदं संहर्तव्यमितीच्छावान् ॥ ७ ॥ आत्ममदाविर्भावे अहंकारभरितः विद्यादिभिः मम समः को वेत्तीति प्रज्ञावान् भवति जीवः इति विवेकः ॥ ८ ॥

भा०—चंद्रमाका मद प्रकट होवे तब चिंतासे भराहुआ जीव, किया जावेगा यह काम होगा क्या? किया हुआ उलटा (निष्फलही) होगा ऐसे संदेहसे चुपका हो बैठता है ४ वायुके मद प्रकट होनेपर गमनसे भरा

हुआ जीव परदेशकी इच्छावाला होता है॥५॥आकाशमद प्रकट होवें तब वाहनसे भरा हुआ हस्ती घोडा आदि वाहनोंका इच्छावाला होता है ॥ ६ ॥ सूर्यका मद प्रकट होनेमें क्रोधअग्निसे भरा हुआ जीव यह हरना चाहिये ऐसी इच्छावाला होता है ॥ ७ ॥ आत्मा (बुद्धि वा क्षेत्रज्ञ आत्माके)मद प्रकट होनेपर अहंकारसे भरा हुआ जीव विद्या आदिकों करके मेरे समान कौन जानता है ऐसी बुद्धिवाला होता है; ऐसा विवेक है ॥ ८ ॥

अथ श्लोकौ ॥ घृणा शंका भयं लज्जा जुगुप्सा चेति पंचकम्॥कुलंशीलंच वित्तंचह्यष्टौपाशाः प्रकीर्तिताः ॥१॥रसो रुधिरमांसेच मेदोमज्जास्थिरेतसी॥सप्तधातुरयं प्रोक्तः सर्वदेहसमाश्रयः ॥२॥इति सप्तधातवः॥ भुक्तमन्नं रसात्मकतयापरिणतं सत् रस इत्युच्यते एवंसर्वत्ररुधिरादिषु रसात्मकतयादि ज्ञेयम् ॥ तनुव्यसनमनोव्यसनधनव्यसनराज्यव्यसनविश्वव्यसनोत्साहव्यसनसेवकव्यसनानीति सप्तव्यसनानि ॥

भा०–अथश्लोक–घृणा (दया) १ शंका २ भय ३ लज्जा ४ जुगुप्सा (निंदा)५ ये पांच और कुल१शील (स्वभाव) २ धन ३ ऐसे ये आठ पाश अर्थात् फाँशी कही हैं ॥१॥रस१रुधिर २ मांस३मेद ४ मज्जा ५ अस्थि ६ वीर्य ७ ये सात धातुहैं सो संपूर्ण देहके आश्रय रहते हैं॥२॥इति सप्तधातवः॥भोजन किया हुआ अन्न रसआत्मकता करके अर्थात् रस रूपहोके विकारको प्राप्त हुआ रस ऐसे कहलाता है । ऐसेही सब जगह रुधिरआदिकोंमेंभी रसआत्मकता आदि जानना; अर्थात् रससे रुधिर, रुधिरसे मांस यह क्रम जानना ॥ तनु (शरीरका) व्यसन १ मनोव्यसन

२ धनव्यसन ३ राज्यव्यसन ४ विश्वव्यसन ५ उत्साहव्यसन ६ सेवकव्यसन ७ ऐसे सात व्यसन हैं ॥

तनुव्यसनोद्गमे शरीरं कृशं जातमिति जीवः खिन्नोभवति॥१॥मनोव्यसनोद्गमे चौर्यादिभीतिमान् जीवोभवति ॥२॥ विश्वव्यसनोद्गमे ग्रहक्षेत्रादिसंपादनेच्छावान्भवति जीवः॥३॥उत्साहव्यसनोद्गमे पुत्रकलत्रादीच्छावान्भवति जीवः ॥४॥ सेवकव्यसनोद्गमे परराष्ट्रगमनादिसकलधर्मपोषणरतो भवति जीवः॥५॥ शेषं स्पष्टम् ॥ कुलगोत्रजातिवर्णाश्रमनामभेदेन षड्भ्रमाः ॥ कर्णाटकद्राविडभेदाभिमान व्यवहारः कुलभ्रमः ॥ १ ॥

भा०-तनुव्यसन उठता है तब शरीर (कृश) माडा होगया ऐसे जीव दुःखी होता है १ मनका व्यसन उठनेमें चोरी आदिके डरवाला जीव होताहै २ विश्वव्यसन उठनेमें घर खेत आदि बनानेकी इच्छावाला जीव होताहै ३ उत्साहव्यसन प्रकट होवे तब पुत्र, स्त्री,आदिकी इच्छावाला जीव होताहै ४ सेवकव्यसन प्रकट होनेमें पराये राज्यमें गमन आदि करके सम्पूर्ण धर्मके पालनमें जीव रहताहै५(शेष)अन्योंका अर्थ स्पष्ट है। कुल १ गोत्र२जाति ३ वर्ण ४ आश्रम, ५ नाम ६ इनभेदोंकरके छह प्रकारके भ्रमहै।कर्णाटक द्राविड आदि भेदके अभिमानवाला जो व्यवहार है सो कुलभ्रम है १ ॥

विश्वामित्रादिव्यवहारोगोत्रभ्रमः २ ब्रह्मक्षत्रवैश्यशूद्रभेदाभिमानव्यवहारो जातिभ्रमः३अष्टादशवर्णेष्वहंश्रेष्ठ इत्यभिमानव्यवहारो वर्णभ्रमः४शेषंस्फुटम्॥

अविद्यास्मितासूयास्पर्धाभिनिवेशःपंचक्लेशाः॥मलमूत्रादिवेष्टितस्थूलशरीरमेवाहमित्यभिमान एवाविद्या ॥ १ ॥ तापत्रयेण परिभवानुभवएवास्मिता ॥२॥ रागादिभिः परिभवानुभवएवासूया ॥ ३॥ सज्जनदर्शने द्वेषबुद्ध्या निषेधनमेव स्पर्धा ॥ ४ ॥

भा०–विश्वामित्र आदि जो व्यवहार हैं सो गोत्रभ्रम है २ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, भेदके अभिमानवाला जो व्यवहार है सो जातिभ्रम है ॥ ३ ॥ अठारह वर्णोंमें मैं श्रेष्ठ हूं ऐसे अभिमानका जो व्यवहार है सो वर्णभ्रम है ॥ ४ ॥ (शेष) बाकी स्पष्ट अर्थ है–अविद्या १ अस्मिता २ असूया ३ स्पर्धा ४ अभिनिवेश ५ ऐसे ये पांच क्लेश हैं ॥ मलमूत्र आदिकोंसे वेष्टित जो स्थूल शरीर है सोही मैं हूं ऐसा अभिमान अविद्या है १ तीन तापोंकरके दुःख होनेका अनुभव करना (सूक्ष्म अहंकाररूप) अस्मिता है ॥ २ ॥ और राग आदिकों करके तिरस्कारका अनुभव करना असूया है ॥३॥ सज्जनके दर्शन होनेमें द्वेषकी बुद्धि करके निषेध करना यह स्पर्धा है ॥ ४ ॥

लोकरंजनाय तदुचितकर्मोद्योगद्वेषादिधारणाऽभिनिवेश इति भावनीयम् ॥ मानसतापःशारीरताप इत्याध्यात्मिकतापद्वयम् ॥ ज्वरगुल्मादिदोषसंपादिततापः शारीरः ॥ १ ॥ असूयामदमात्सर्यादिसंपादितचित्तव्याकुलतैव मानसतापः २॥ इति विभावनीयम् । क्षयतापः, अतिशयतापः, साहसपतनतापः, इतिस्वर्गलोकतापत्रयम् ॥ यथा

१ गुणेषु दोषारोपः असूया अर्थात् गुणोंमें जो दोषका आरोपणकरना यह असूयाका लक्षण है।

स्वार्जितधनक्षयेन मनोविचारात्मकतापः तथा, पुण्यकर्मक्षये पुनः पतनभीतिजन्यताप एव क्षयतापः १ स्वर्गलोकगमनसमये स्वाधिकतरदेवतास्थापितलोकदर्शनमेवाऽतिशयतापः २ ॥

भा०–लोगोंकी प्रसन्न करनेंके वास्ते तिनके मनलायक कर्मका उद्योग द्वेष आदिकी धारणा करनी सो अभिनिवेश है ऐसे जानना ॥५॥ मानसताप १ शारीरताप २ ऐसे आध्यात्मिक दो ताप हैं–ज्वर १ तापतिल्ली २ आदि दोष संपादितताप शारीरसंज्ञक हैं १ असूया, मद, मत्सरता, इत्यादिकोंसे उत्पन्न हुई चित्तकी व्याकुलता मानसताप है ॥२ ऐसा विचार करना ॥ क्षयताप १ अतिशयताप २ साहसपतनताप ३ ये तीन स्वर्गलोकके ताप (दुःख) हैं ॥ जैसे अपनें संचित किये हुए धनके नष्ट होनेंमें मनको विचारात्मक ताप होता है तैसेही पुण्य नष्ट होनेंमें फिर परनेंकी (भीति) भयसे उत्पन्न हुआ ताप क्षयताप है १ स्वर्गलोकमें जाते समय अपनासे जो अधिक देवताका स्थापित किया हुआ लोकके दर्शन होना यह अतिशयताप है ॥ २ ॥

पुण्यकर्मक्षयाऽनंतरं तत्रत्यसुरकोटिभिर्मुद्गरमुसलप्रहरणेन कम्पितसर्वांगपतनं स्वर्गलोकसाहसपतनतापः॥३॥इतिबोध्यम्॥अथपंचसप्ततिगुणाःकथ्यंते। अस्थिमांसत्वचानाडी रोमचैवतुपंचमम् ॥ पंचक्षितिगुणाःप्रोक्तास्तथैवांशाःप्रकीर्तिताः ॥ १ ॥ श्लेष्मा मूत्रंतथास्वेदः शुक्रंशोणितमेवच ॥ अपांपंचगुणाः प्रोक्तास्तथैवांशाःप्रकीर्तिताः ॥ २ ॥ क्षुधातृषा तथानिद्रा ह्यालस्यंसंग एवच ॥ अग्नेःपंचगुणाःप्रोक्ता स्तथैवांशाःप्रकीर्तिताः ॥ ३ ॥

भा०-पुण्यकर्म क्षय होनेके अनंतर तहां स्वर्गवासि देवगणों करके मुद्गरे, मुसल, आदिके प्रहारसे कांपते हुए सब अंगवालेको नीचे पटकना ऐसा यह स्वर्गलोकमें साहसपतन ताप है ऐसे जानना ॥ अंश पिछतर गुणोंको कहते हैं॥अस्थि १ मांस २ त्वचा ३नाडी ४ रोम५ये पांच पृथ्वीके गुणहैं तथा इनको पृथ्वीके अंशभी कहते हैं॥१॥श्लेष्म (कफ) १ मूत्र २ पसीना ३ शुक्र ४ शोणित ५ ये पांच जलके गुण हैं तथा इनको जलके अंशभी कहते हैं ॥२॥ क्षुधा१तृषा २ निद्रा ३ आलस्य ४ संगहोना ५ ये पांच अग्निके गुण हैं तथा ये अग्निके अंशभी कहलाते हैं ॥ ३ ॥

धावनंचलनंचैव कुंचनंचप्रासारणम् ॥ वियोगश्चेति विज्ञेयं वायोः पंचगुणाइति ॥ ४ ॥ रागद्वेषौभयंलज्जा मोहश्चनभसस्तथा॥ इतिपंचगुणाःप्रोक्तास्तथैवांशाःप्रकीर्तिताः ॥ ५ ॥ तथाचपृथिव्याः शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मकपंचगुणकत्वेन शब्दादिपंचगुणसंबंधिन्यां पृथिव्यांपंचविंशतिर्गुणाःप्राप्ताः एकैकस्यशब्दगुणादेः श्लोकोक्तपंचाविशेषगुणत्वकथनात् ॥ तथाऽपांविंशतिर्गुणाः अग्नेःपंचदशगुणाः वायोर्दशगुणाः आकाशस्य पंचगुणाः इत्याहृत्य पंचसप्ततिर्गुणाः ७५ इतिं सुधीभिर्विभावनीयम् ॥

भा०-भाजना १ चलना २ सिमटना ३ फैलना ४ वियोग (अलग) होना ५ ये पांच वायुके गुण हैं तथा अंशभी कहलाते हैं ॥ ४ ॥ राग, १ द्वेष २ भय ३ लज्जा ४ मोह ५ ये पांच आकाशके गुण हैं तथा अंशभी

१ शब्दगुण आकाश इत्युक्तत्वात् शब्दगुणादेः कोर्थ आकाशादेः पृथक् पृथक् पंचपंचगुणकथनात् तेषां चाकाशादीनां पृथिव्यां सत्त्वात् पृथिव्याः पंचविंशतिर्गुणा इति ।

कहलाते हैं ५ सो इनको स्पष्ट कहते हैं; पृथिवीमें शब्द स्पर्श रूप रस गंध ये पांच गुण (पांचोंही तत्वोंके हैं) इस लिये शब्द आदि पांच गुण संबंधिनी पृथ्वीमें पच्चीस गुण प्राप्त हैं क्योंकि एक २ (शब्द गुणादि) आकाशादिके पांच२ गुण कहचुके हैं॥और जलके बीस गुण हैं, अग्निके पंदरह गुण हैं, वायुके दश गुण हैं, आकाशके पांच गुण हैं ऐसे ये सब इकट्ठे होके पिछहत्तर ७५ गुण होते हैं ऐसे पंडितजनोंको विचारना चाहिये ॥

श्वेतपीतहरितरक्तकृष्णमांजिष्ठभेदेन रूपंषड्विधम् ॥ शीतोष्णमृदुकठिनभेदेन स्पर्शश्चतुर्विधः ॥ अक्षराऽनक्षरभेदेनशब्दोद्विविधः ॥ मधुराऽम्लतिक्तकटुककषायलवणभेदेन रसः षड्विधः ॥ सुगंधदुर्गंधभेदेन गंधोद्विविधः ॥ प्राणवायुः नीलवर्णः १ अपानवायुः हरितवर्णः २ व्यानः कपिलवर्णः ३ उदानवायुः तडिद्वर्णः ४ समानः नीलंवर्णः ५ नागवायुः पीतवर्णः ६ कूर्मःश्वेतवर्णः ७ कृकलः अंजनवर्णः ८ देवदत्तः स्फटिकवर्णः ९ धनंजयः नीलवर्णः १० इति दशवातानां वर्णकथनम् ॥

भा०-सफेद, १ पीला २ हरा ३ लाल ४ काला ५ मंजीठा ६ ऐसे भेदों करके छह प्रकारका रूप(रंग) है ॥ शीत १ गरम २ कोमल३ करडा ४ इनभेदों करके चार प्रकारका स्पर्श है ॥ अक्षर, अनक्षर, (विनाअक्षर) ऐसे भेद करके दोप्रकारका शब्द है॥मधुर १ खट्टा२कडुवा३ चर्चरा ४ कसैला ५ नमकीन ६ ऐसे भेद करके छह प्रकारका रस है ॥ सुगंध दुर्गंध भेद करके दोप्रकारका गंध है ॥ प्राणवायु नीलावर्ण है १

अपानवायु हरावर्ण है २ व्यान (कपिल) धूसरवर्ण है ३ उदानवायुका विजेली सरीखा वर्ण है ४ समानवायु नीलवर्ण है ५ नागवायु पीलावर्ण है ६ कूर्म सफेदवर्ण है ७ कृकल अंजनवर्ण है ८ देवदत्त स्फटिकवर्ण है ९ धनंजयवायु नीलवर्ण है १० इति दशवायुओंका वर्ण ॥

ऐश्वर्यस्यसमग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः॥ज्ञानवैराग्ययोश्चैवषण्णां भग इतीरणात्।१।इत्यैश्वर्यादिषट्कं॥उत्पत्तिनिधनेयोर्वैभूतानामाऽऽगतिंगतिम्॥ वेत्ति विद्यामविद्यांचसवाच्योभगवानिति॥२॥इत्युत्पत्त्यादिषट्कम् ॥ नादबिंदुकलाः नादादित्रयम् गलविवरे यत्कंठनिनादनकरणं सनादः १ अनुस्वारोबिंदुः २ नादैकदेशा कलेत्यर्थः ॥ ३ ॥ तथाचाऽसंगाऽद्विती‐यब्रह्मप्रतिपादके वेदांतशास्त्रे वृद्धवचनमुपसृत्याऽध्यारोपवशात्संज्ञाः संतीति प्रतिपादितम् ॥

भा०–संपूर्ण ऐश्वर्य १ वीर्य अर्थात् पराक्रम २ यश ३ लक्ष्मी ४ ज्ञान ५ वैराग्य ६ इन छहोंको भग कहते हैं १ इति ऐश्वर्यादिषट्कम्॥ —जो पुरुष प्राणियोंकी उत्पत्ति १ मृत्यु २ आवना ३ जाना ४ तथा विद्या ५ अविद्याको जानता है वह भगवान् ऐसा कहना २ इति उत्पत्ति आदि छह ॥ नाद १ बिंदु २ कला ३ ये नाद आदि तीन हैं ॥ गलके छिद्रमें जो कंठमें निनाद किया जाता है सो नाद है १ अनुस्वारको बिंदु कहते हैं २ नादके एकदेशमें होनेवाली कला है ३ तथाच कहते हैं असंग अद्वितीय ब्रह्मको प्रतिपादन करनेवाले वेदान्तशास्त्रमें वृद्धवचनका आश्रय लेके अध्यारोप जैसे(रज्जुमें सर्प) तिसके वशसे ये सब संज्ञा है ऐसा (प्रतिपादित) कहा है ॥

१–अध्यारोपो नाम वस्तुनि अवस्त्वारोपः । वस्तु सच्चिदानंदात्मकं ब्रह्म, अवस्तु अज्ञानादिसकलजडसमुदायस्वरूपमहाप्रपंच इति ॥

अथ अपवादलक्षणम् ॥ अधिष्ठानमात्रपर्य्यवशेषणमपवादः ॥ तथाच सर्वप्रपंचरहितब्रह्माऽहमस्मीति प्रत्यगऽभिन्नब्रह्मज्ञानान्मुक्तिरिति सिद्धम् ॥

इति संज्ञाप्रकरणं समाप्तिमगात् सं० १९८२ ॥

भा०–अथ अपवादका लक्षण। जो अधिष्ठान मात्रही अवशेष रह जावे अर्थात् जैसे रज्जुमें सर्प है तहां रज्जु अधिष्ठान है वही ज्ञान होके शेष रह जावे, सो अपवाद है ॥ तथाच सोही सर्व प्रपंचसे रहित (ब्रह्माहमस्मि) में ब्रह्म हूं ऐसा प्रत्यक् आत्मासे अभिन्न ब्रह्मज्ञानसे मुक्ति है ऐसा सिद्ध भया ॥ इति श्रीबदरीपुरनिवासि–गौडवंशोद्भवद्विजशालिग्रामात्मज–पंडित–वस्तीरामविरचित–भाषाटीकायां वेदान्तसंज्ञाप्रकरणं समाप्तम् ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना–खेतवाड़ी–मुंबई.